प्रथमावृत्ति ५,००० दिनाक १७ ग्रक्टूबर, १६५२ [ग्राघ्यात्मिक शिक्षण शिविर, जयपुर के ग्रवनर पर]

मूल्य: एक रुपया

मुद्रक : जयपुर प्रिण्टर्स एम० झाई० रोड जयपुर

### प्रकाशकीय

चर्म-चक्षुग्रो के विषयों में मुग्ध जगत को सामान्य-विशेषात्मक पदार्थं का दर्शन करानेवाली 'श्रद्धितीय चक्षु' प्रस्तुत करते हुए श्रत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। प्रस्तुत कृति श्री प्रवचनसार ग्रन्थ की गाथा ११४ पर हुए पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी के गुजराती प्रवचनों के हिन्दी ग्रनुवाद के रूप में प्रकाशित की जा रही है।

पूर्वविदेह क्षेत्र मे विद्यमान तीर्थंकर सीमघर स्वामी के समवशरण मे जाकर उनकी साक्षात दिव्यघ्वनि सुननेवाले कलिकाल सर्वज्ञ श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने समयसार, प्रवचनसार ग्रादि परमागमो की मेंट देकर भरतक्षेत्र के जीवो पर ग्रनन्त उपकार किया है।

श्री कुन्दकुन्दाचार्य रचित ग्रन्थों में प्रवचनसार भी अत्यन्त महत्त्वपूर्णं ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ ज्ञानप्रधान शैली में वस्तुस्वरूप का वर्णन करता है, फिर भी सवंत्र ग्रध्यात्म की सौरभ से सुगन्धित है — यही इसकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्णं विशेषता है। पूज्य गुरुदेवश्री ने इस पर ग्रनेक वार ग्राद्योपान्त प्रवचन किये हैं। इस ग्रन्थ की महिमा का यथार्थं परिचय तो इसके गहन ग्रध्ययन द्वारा ही प्राप्त हो सकता है, फिर भी प्रस्तुत कृति से उसका नमूना तो मिल ही सकता है।

पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी, इस युग मे श्राचार्य कुन्दकुन्द श्रादि दिगम्बर सन्तो एव श्रात्मज्ञानी विद्वानो द्वारा लिपिबद्ध जिनवाणी के सरलतम व्याख्याकार, श्रात्मानुभवी महापुरुष हो गए हैं। उनके श्रन्तमुं खो पुरुषायंप्रेरक प्रवचनो ने लाखो लोगो को 'श्रद्वितीय चक्षु' प्रदान की है। सरलभाषा एव रोचक शैली मे जिनागम का ममं समभाकर, उन्होने हम सब पर ग्रनन्त उपकार किया है। उनके द्वारा प्रारम्भ श्राध्यात्मिक क्रान्ति के फलस्वरूप जनसाधारण

में भी जिनागम का ग्रघ्ययन करने की रुचि, उमे ममक्तने की क्षमता, एव जीवन मे उतारने की प्रेरएा। प्रस्फुटित हुई है।

इस कृति मे सकलित पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचनो को, टेपरिकार्ड से सुनकर लिखने मे तथा उन्हें व्यवस्थित करने मे श्रीमान् पण्डित हीरानान भीखालाल दहेगाँववाले, श्री रमग्गलाल माग्गिकलाल शाह एव श्री हेमन्तमाई गाँघी ने ग्रपना श्रमूल्य सहयोग दिया है, जिमके फलम्बरूप श्री शान्तिमाई सी० जवेरी वम्बईवालो ने इसे गुजराती मे प्रकाशित किया है। प्रस्तुत कृति गुजराती प्रकाशन का हिन्दी ग्रनुवाद है। प० ग्रमयकुमारजी शास्त्री ने इसका हिन्दी श्रनुवाद करने की सहर्ष स्वीकृति दी एव श्रत्यल्प समय मे ग्रनुवाद कर दिया। एतदर्य उपर्युक्त सभी महानुमावो के प्रति मैं हादिक श्रामार व्यक्त करता हैं।

सभी लोग इस कृति के भ्रष्ययन से वस्तु का यथार्थ स्वरूप समक्षकर शुद्धात्मतत्त्व की शीतल छाया मे शास्वत सुख प्राप्त करें - यही कामना है।

ए-४, बापूनगर जयपुर – ३०२०१५ नेमीचन्द पाटनी मन्त्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

पज्जय गडणं किच्चा, दन्वं पि य जो हु गिह्ह्ये लोए। सो दन्वत्थिय भिगुत्रो, विवरीम्रो पज्जयत्थिम्रो।।

पर्याय को गौए। करके जो द्रव्य को ग्रह्ण करता है, वह द्रव्याधिकनय है और उससे विपरीत पर्यायाधिकनय है अर्थात् द्रव्य को गौए। करके जो पर्याय को ग्रह्ण करता है, वह पर्यायाधिकनय है।

- माइल्लववल : द्रव्यस्वभावप्रकाशक नयचक्र, गाया १८६

### अनुवादक की ओर से

श्रद्वितीयचक्षु-प्रदाता पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी ने श्रपने सरल एवं वोधगम्य प्रवचनों में जिनागम का मर्म खोलकर हम सब पर श्रनन्त-अनन्त उपकार किया है। टेपों में सुरक्षित तथा पुस्तकाकार प्रकाशित उनके प्रवचन हमारी अमूल्य निधि हैं। ये प्रवचन अधिकाश गुजराती में हुए हैं. अतः हिन्दी माषा में इनका अनुवाद एवम् प्रकाशन श्रत्यन्त आवश्यक है।

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचनों का हिन्दी अनुवाद कार्य महान सौमाग्य एव गौरव का विषय होते हुए भी अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण है।

लगभग १५ वर्ष पहले मुझे पूज्य गुरुदेवश्री के समागम में ग्राने का सौमाग्य प्राप्त हुआ व उनकी कृपा से जिनवाणी के ग्रध्ययन-मनन की रुचि जागृत हुई तथा तभी से वरावर श्रुत-सिन्धु में भरे हुए रत्नों की प्राप्ति का प्रयास जारी है।

ग्रात्मधर्म (हिन्दी) के लिए तीन वर्ष तक उनके समयसार पर हुए प्रवचनों का हिन्दी अनुवाद करने का भी मुझे अवसर मिला, तथा अव इस अद्वितीय चक्षु के अनुवाद का ग्रवसर पाकर ग्रपने को सौमाग्यशाली अनुमव करता हूँ।

अनुवाद करने में मूलभावों को ग्राक्षुण्ण रखने के साध-साथ माषा के सहज प्रवाह का भी ध्यान रखा गया है। इस कार्य में माननीय खॉ० हुकमचन्दजी भारित्ल का अमूल्य मार्ग-दर्शन प्राप्त हुआ है, एतदर्श उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

इस कृति के अध्ययन-भनन द्वारा सभी लोग 'अदितीय चक्षु' प्राप्त करके शुद्धात्मतत्त्व का दर्शन करें - यही भावना है।

# दोनों नयों की सफलता

जीव का स्वरूप दो नयों से बरावर ज्ञात होता है। त्र्राकेले द्रव्यार्थिकनय या अकेले पर्यायार्थिकनय से ज्ञात नहीं होता; इसलिए दोनो नयों का उपदेश ग्रहण करने योग्य है।

एकान्त द्रव्य को ही स्वीकार कर और पर्याय की स्वीकार न करे तो पर्याय के बिना द्रव्य का स्वीकार किसने किया ? काहे में किया ? और मात्र पर्याय की हो स्वीकार करें, द्रव्य की स्वीकार न करे तो पर्याय कहाँ दृष्टि लगाकर एकाग्र होगी ? इसलिए दोनों नयो का उपदेश स्वीकार करके द्रव्य-पर्याय की सिध करने योग्य है।

द्रव्य-पर्याय की सिध का अर्थ क्या ? पर्याय को पृथक् करके लक्ष में न लेते हुए, अन्तमुं ख करके द्रव्य के साथ एकाकार करना अर्थात् द्रव्य-पर्याय के भेद का विकल्प तोड़कर एकतारूप निविकल्प-अनुभव करना ही द्रव्य-पर्याय को सिध है - वही दोनों नयों की सफलता है।

पर्याय को जानते हुए उसी के विकल्प में रुक जाये तो वह नय की सफलता नहीं है; उसीप्रकार द्रव्य की जानते हुए यदि उसी में एकाग्रता न करे तो वह भी नय की सफलता नहीं है। द्रव्य-पर्याय दोनों को जानकर दोनों के विकल्प तोड़कर पर्याय को द्रव्य मे श्रंतर्लीन, ग्रमेद, एकाकार करके श्रनुभव करने में ही दोनो नयों की सफलता है।

> -पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी (भ्रात्मधर्म, वर्ष १६, ग्रक १८२, जुन १९६०, कवरपृष्ठ २)



#### प्रवचनसार गाथा ११४

श्रयंकद्रव्यस्यान्यत्वानन्यत्वविप्रतिषेचमुद्घुनोति -

दन्वद्विएरा सन्वं दन्वं तं पज्जयद्विएरा पुराो । हवदि य श्रण्रामराण्ण तक्काले तम्मयत्तादो ॥११४॥ द्रव्याणिकेन सर्वं द्रव्यं तत्पर्यायाणिकेन पुन ।

भवति चान्यदनन्यत्तत्काले तन्मयत्वात् ।।११४॥

ग्रयैकद्रव्यस्य पर्यायैस्सहानन्यत्वाभिधानमेकत्वमन्यत्वाभिधानमनेकत्व च नयविभागेन दर्शयति, ग्रथवा पूर्वोक्तसद्भावनिबद्धाः
सद्भावनिबद्धमुत्पादद्वय प्रकारान्तरेण समर्थयति – हवदि भवति ।
किं कर्तृ र सच्व दच्व सर्वं विविधत्ताविविधत्तजीवद्रव्यम् । किं
विशिष्ट भवति र ग्रगण्णां ग्रनन्यमभिन्नमेक तन्मयमिति । केन सह र

श्रव एक ही द्रव्य के श्रन्यपना श्रौर श्रनन्यपना होने मे जो विरोध है, उसे दूर करते हैं। (श्रर्थात् उसमे विरोध नहीं श्राता – यह बतलाते हैं।)

ग्रन्वयार्थ: [द्रन्याथिकेन] द्रव्यार्थिक (नय) से [सर्व] सब [द्रव्यं] द्रव्य हैं, [पुन: च] ग्रीर [पर्यायाथिकेन] पर्यायार्थिक (नय) से [तत्] वह (द्रव्य) [ग्रन्यत्] ग्रन्य-ग्रन्य है, [तत्काले तन्मयत्वात्] क्योकि उससमय तन्मय होने से [ग्रनन्यत्] (द्रव्य पर्यायो से) श्रनन्य है।

सर्वस्य हि वस्तुनः सामान्यविशेषात्मकत्वात्तत्स्वरूपमृत्पश्यतां यथाक्रमं सामान्यविशेषौ परिच्छिन्दती हे किल चक्षुषौ, द्रव्याधिकं पर्यायाधिकं चेति । तत्र पर्यायाधिकमेकान्तिनमीलितं विधाय केवलोन्मीलितेन द्रव्याधिकेन यदावलोक्यते तदा नारकतिर्यग्मनुष्य-देवसिद्धत्वपर्यायात्मकेषु विशेषेषु व्यवस्थितं जीवसामान्यमेकमवलोक्यतामनवलोकितविशेषाणां तत्सर्वं जीवद्रव्यमिति प्रतिभाति । यदा तु द्रव्याधिकमेकान्तिनमीलित विधायकेवलोन्मीलितेन पर्यायाधिकेना-वलोक्यते तदा जीवद्रव्ये व्यस्थितान्नारकतिर्यगमनुष्यदेवसिद्धस्व-

तेन नारकतिर्यंड् मनुष्यदेवरूपविभावपर्यायसमूहेन केवलज्ञानाद्यनन्त-चतुष्टयशक्तिरूपसिद्धपर्यायेगा च। केन कृत्वा ? दव्विष्ठुएगा शुद्धान्वय-द्रव्याधिकनयेन। कस्मात् ? कुण्डलादिपर्यायेषु सुवर्णस्येव भेदाभावात्। तं पज्जयिष्ठुएगा पुगो तद्द्रव्य पर्यायाधिकनयेन पुन श्रण्गां श्रन्य-द्भिन्नमनेक पर्याये सह पृथग्भवति। कस्मादिति चेत् ? तक्काले

टीका: — वास्तव मे सभी वस्तु सामान्य-विशेषात्मक होने से वस्तु का स्वरूप देखनेवालो के ऋमश सामान्य श्रीर विशेष को जाननेवाली दो श्रांखें हैं – (१) द्रव्यार्थिक श्रीर (२) पर्यायाधिक।

इनमें से पर्यायाधिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके जब मात्र खुली हुई द्रव्याधिक चक्षु के द्वारा देखा जाता है, तव नारकपना, तिर्यंचपना, मनुष्यपना, देवपना श्रौर सिद्धपना — पर्यायस्वरूप विशेषों मे रहनेवाले एक जीवसामान्य को देखनेवाले श्रौर विशेषों को न देखनेवाले जीवों को 'वह सब जीवद्रव्य है' — ऐसा भासित होता है। श्रौर जब द्रव्याधिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके मात्र खुली हुई पर्यायाधिक चक्षु के द्वारा देखा जाता है, तब जीवद्रव्य मे रहनेवाले नारकपना, तिर्यंचपना, मनुष्यपना, देवपना श्रौर सिद्धपना — पर्याय-स्वरूप श्रनेक विशेषों को देखनेवाले श्रौर सामान्य को न देखनेवाले पर्यायात्मकान् विशेषाननेकानवलोकयतामनवलोकितसामान्यानामन्य-दन्यत्प्रतिभाति । द्रव्यस्य तत्तद्विशेषकाले तत्तद्विशेषेभ्यस्तन्मयत्वेना-नन्यत्वात् गरानृरापर्रणदारुमयह्व्यवाहवत् । यदा तु ते उमे ग्रपि द्रव्यायिकपर्यायायिके तुल्यकालोन्मीलिते विधाय तत इतश्चावलोक्यते तदानारकतिर्यग्मनुष्यदेवसिद्धत्वपर्यायेषु व्यवस्थित जीवसामान्यं जीवसामान्ये च व्यवस्थिता नारकतिर्यग्मनुष्यदेवसिद्धत्वपर्यायात्मका विशेषाश्च तुल्यकालमेवावलोक्यन्ते । तत्रकचक्षुरवलोकनमेकदेशाव-

तम्मयत्तादो तृगााग्निकाण्ठाग्निपत्राग्निवत् स्वकीयपर्याये सह तत्काले तन्मयत्वादिति । एतावता किमुक्त भवति ? द्रव्याधिकनयेन यदा वस्तुपरीक्षा क्रियते तदा पर्यायसन्तानरूपेगा सर्वं पर्यायकदम्बक द्रव्यमेव प्रतिभाति । यदा तु पर्यायनयविवक्षा क्रियते तदा द्रव्यमपि पर्यायरूपेगा भिन्न भिन्न प्रतिभाति । यदा च परस्परसापेक्षनयद्वयेन

जीवों को (वह जीवद्रव्य) ग्रन्य-श्रन्य भासित होता है, क्यों कि द्रव्य उन-उन विशेषों के समय तन्मय होने से उन-उन विशेषों से ग्रनन्य है — कण्डे, घास, पत्ते ग्रीर काष्ठमय श्रान्न की भाँति। (जैसे घास, लकडी इत्यादि की ग्रान्न उस-उस समय घासमय, लकडी मय इत्यादि होने से वास, लकडी इत्यादि से ग्रन्य है, उसीप्रकार द्रव्य उन-उन पर्यायरूप विशेषों के समय तन्मय होने से उनसे ग्रन्य है, पृथक् नहीं है।) ग्रीर जब उन द्रव्याधिक ग्रीर पर्यायाधिक दोनों ग्राँखों को एक ही साथ खोलकर उनके द्वारा ग्रीर इनके द्वारा (द्रव्यार्थिक तथा पर्यायाधिक चक्षुग्रों के द्वारा) देखा जाता है, तव नारकपना, तिर्यंचपना, मनुष्यपना, देवपना ग्रीर सिद्धपना — पर्यायोमें रहनेवाला जीवसामान्य तथा जीवसामान्य में रहनेवाले नारकपना, तिर्यंचपना, मनुष्यपना, देवपना ग्रीर सिद्धत्व — पर्याय-स्वरूप विशेष तुल्यकाल में ही (एक ही साथ) दिखाई देते है। वहाँ एक ग्राँख से देखा जाना, वह एकदेश ग्रवलोकन है ग्रीर

लोकनं, द्विचक्षुरवलोकनं सर्वावलोकन । ततः सर्वावलोकने द्रव्यस्यान्यत्वानन्यत्वं च न विप्रतिषिध्यते ।।

युगपत्समीक्ष्यते, तदैकत्वमनेकत्व च युगपत्प्रतिभातीति । यथेद जीवद्रव्ये व्याख्यान कृत तथा सर्वद्रव्येषु यथासभव ज्ञातव्यमित्यर्थ ।। २

दोनो ग्रांखो से देखना, वह सर्वावलोकन (सम्पूर्ण श्रवलोकन) है। इसलिए सर्वावलोकन मे द्रव्य के श्रन्यत्व श्रीर श्रनन्यत्व विरोध को प्राप्त नहीं होते।

भावार्थ: - प्रत्येक द्रव्य सामान्य-विशेषात्मक है, इसलिये प्रत्येक द्रव्य 'वह का वह' भी रहता है ग्रौर 'वदलता' भी है। द्रव्य का स्वरूप ही ऐसा उभयात्मक होने से द्रव्य के ग्रनन्यत्व मे ग्रौर ग्रन्यत्व मे विरोध नही है। जैसे - मरीचि ग्रौर भगवान महावीर का जीवसामान्य की ग्रपेक्षा से ग्रनन्यत्व ग्रौर जीव के विशेषो की ग्रपेक्षा से ग्रन्यत्व होने मे किसी प्रकार का विरोध नहीं है।

द्रव्याधिकनयरूपी एक चक्षु से देखने पर द्रव्यसामान्य ही ज्ञात होता है, इसलिए द्रव्य अनन्य अर्थात् 'वह का वही' भासित होता है और पर्यायाधिकनयरूपी दूसरी चक्षु से देखने पर द्रव्य के पर्यायरूप विशेष ज्ञात होते है, इसलिए द्रव्य अन्य-अन्य भासित होता है। दोनो नयरूपी दोनो चक्षुओं से देखने पर द्रव्यसामान्य और द्रव्य के विशेष दोनो एकसाय ज्ञात होते हैं, इसलिये द्रव्य अनन्य तथा अन्य-अन्य दोनो भासित होता है।

अमृतचन्द्राचार्यकृत टीका

<sup>&</sup>lt;sup>२</sup> जयसेनाचार्यकृत टींका

### उत्थानिका व गाथा पर प्रवचन

यहाँ आचार्यदेव सामान्य-विशेषात्मक द्रव्य का स्वरूप बताते हुए कहते हैं कि द्रव्य सामान्यपने वैसे का वैसा ही अर्थात् अनन्य है ग्रीर विशेषपने भिन्न-भिन्न — अन्य-अन्य है। अहाहा ! वस्तु पर्याय-अपेक्षा अन्य-अन्य होते हुए भी द्रव्य-अपेक्षा अनन्य ही है। यद्यपि यहाँ जीवद्रव्य पर अनन्यत्व व अन्यत्व घटित करेगे, तथापि प्रत्येक द्रव्य सामान्य अर्थात् वही का वही — अनन्य है तथा विशेष अर्थात् अन्य-अन्य भी है। द्रव्य के विशेष अर्थात् पर्याये स्वकाल मे अन्य-अन्य होते हुए भी उस द्रव्य से अनन्य ही हैं, द्रव्य से भिन्न नही हैं। भाई ! यह तो प्रत्येक द्रव्य के स्वरूप का कथन है।

कर्म, शरीर, परिवार, पैसा, इज्जत ग्रादि के साथ ग्रात्मा का कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि ये सब परद्रव्य तो ग्रात्मा से भिन्न हीं है, ग्रन्य हीं हैं, ग्रन्य नहीं हैं। यहाँ तो द्रव्य को ग्रपने में ही ग्रन्यत्व व ग्रनन्यत्व होने में विरोध नहीं हैं—यह बात सिद्ध करते हैं। प्रत्येक द्रव्य ग्रपने स्वरूप में कायम रहकर प्रतिसमय भिन्न-भिन्न ग्रर्थात् ग्रन्य-भ्रन्य ग्रपन्य श्रवस्थारूप होता है, ग्रत पर्याय-ग्रपेक्षा उसे ग्रन्य-ग्रन्य भी कहा जाता है ग्रौर वह ग्रवस्था द्रव्य की ही है, द्रव्य स्वय ही उस ग्रवस्थारूप परिग्मित हुग्रा है, इसिलये वह ग्रनन्य भी कहा जाता है। ग्रहाहा इसमें सारी दुनिया का परिचय दे दिया है।

ग्रहाहा । क्या सूक्ष्म तत्त्वज्ञान है। कहते हैं कि पर्याय मे जीव को नारकी ग्रादि श्रनेकपना होते हुए भी जीव श्रनन्य है, क्यों कि ग्रात्मा के साथ वह पर्याय तन्मय है। चाहे हिंसा के परिगाम हो या भक्ति-पूजा-दया-दान ग्रादि के परिगाम हो या रौद्रघ्यान के परिगाम हो – ये सभी परिगाम द्रव्य की पर्याय मे हैं। वे परिगाम भिन्न- भिन्न ग्रवस्थारूप है, इसलिये ग्रात्मा को ग्रन्य-ग्रन्य भी कहा जाता है ग्रीर ग्रात्मा उन परिगामों में वर्त्तता है, इसलिए ग्रनन्य भी कहा जाता है। परपदार्थों के साथ ग्रात्मा का कोई सम्बन्ध नहीं है, क्यों कि वे तो सर्वथा भिन्न ही हैं, ग्रनन्य नहीं हैं। यहाँ तो कहते हैं कि प्रत्येक द्रव्य की पर्याय ग्रन्य-ग्रन्य उत्पन्न होती हुई द्रव्य से ग्रनन्य है। श्रहाहा जो ग्रन्य है, वही ग्रनन्य है – ऐसा ग्रविरोधपने सिद्ध करते हैं।

## श्रमृतचन्द्राचार्यकृत टीका पर प्रवचन

वास्तव में सभी वस्तु सामान्य-विशेषात्मक होने से वस्तु का स्वरूप देखनेवालो के क्रमशः सामान्य श्रौर विशेष को जाननेवाली दो श्रॉखें हैं — (१) द्रव्यार्थिक श्रौर (२) पर्यायार्थिक ।

देखो, यहाँ द्रव्य शब्द का प्रयोग न करके 'वस्तु' कहा है। सर्वस्य हि वस्तुनः — ऐसा कहा है, क्यों कि इसमें अनन्त शक्तियाँ बसी हुई हैं। श्रहाहा । प्रत्येक द्रव्य को, चाहे वह परमारणु हो, आकाश हो या जीव हो — वस्तु कहा है; क्यों कि उसमें अनन्त अन्वयी गुरण बसे हुए हैं। द्रव्य अनन्त-अनन्त गुरणो — शक्तियों द्वारा भरा हुआ है, इसिलए उसे वस्तु कहा है। द्रव्य में बसी हुई शक्तियाँ तद्रूपपने द्रव्य की स्वय की हैं। ऐसा नहीं है कि दूसरे की शक्ति यहाँ वस्तु में आ गई हो या वस्तु दूसरे की शक्तियों में जा बसी हो। देखो, यह वस्तु का स्वरूप ! सबसे निकट अपना शरीर या स्त्री-परिवार आदि सब बिलकुल भिन्न चीजे हैं, जबिक द्रव्य का विशेष अन्य-अन्य होते हुए भी द्रव्य से अनन्य है, क्यों कि वह विशेष — पर्याय द्रव्य से भिन्न चीज नहीं है। जैसे परद्रव्य बिलकुल भिन्न है, वैसे ही भिन्न-भिन्न पर्यायें भी बिखकुल भिन्न ही है — ऐसा नहीं है। यद्यपि पहले नहीं थी और बाद में उत्पन्न हुई है — इस अपेक्षा से उसे अन्य भी कहा है, तथापि उसमें द्रव्य वर्त्तता है — इस अपेक्षा से अनन्य भी है।

देखो । वास्तव मे सर्व वस्तु सामान्य-विशेषात्मक होने से — इस वाक्य मे सर्व प्रथात् ग्रनन्त वस्तु के सम्बन्ध मे कहा है, एक वस्तु के सम्बन्ध मे नहीं कहा । प्रत्येक वस्तु स्वय ग्रपने से ही सामान्य-विशेपात्मक है, द्रव्यरूप से सामान्य ग्रौर पर्याय-ग्रपेक्षा विशेषरूप है — ऐसा द्रव्य का सामान्य-विशेषस्वरूप स्वत है। जैसे सामान्यपना — एकरूपपना द्रव्य का स्वरूप है, उसीप्रकार विशेषपना — ग्रन्यरूपपना भी उसका स्वरूप ही है। विशेष ग्रर्थात् पर्याय परसयोग या पर के द्वारा होती है — ऐसा नहीं है। प्रत्येक द्रव्य की उस-उस समय की वह विशेष ग्रवस्था पहले नहीं थी ग्रौर बाद में हुई, इसलिए वह भिन्न द्रव्य के कारण हुई है — ऐसा नहीं है। पहले नहीं थी ग्रौर बाद में सुई — इस ग्रपेक्षा से पर्याय ग्रन्य है, तो भी उस विशेष — पर्याय में सामान्य वर्त्तता है, इसलिये वह ग्रनन्य भी है, वह सामान्य से भिन्न चीज नहीं है। जैसे ग्रन्य सभी परद्रव्य विलकुल भिन्न हैं, वैसे पर्याय सामान्य से भिन्न नहीं है।

देखों। एक ग्रात्मा का दूसरे ग्रात्मा से कोई सम्बन्ध नहीं है। यहाँ सामान्यपने सभी ग्रात्माएँ एक हैं ग्रीर विशेषपने भिन्न हैं — ऐसा नहीं है। ग्रथवा, वे सामान्यपने भिन्न है ग्रीर विशेषपने एक हैं — ऐसा भी नहीं है। इसीप्रकार ग्रन्य समस्त ग्रात्माएँ तथा ग्रनन्त परमाणु इस ग्रात्मा से सामान्य-ग्रपेक्षा भिन्न तथा विशेष-ग्रपेक्षा एक हैं — ऐसा भी नहीं है। ग्रथवा, सामान्य-ग्रपेक्षा एक तथा विशेष-ग्रपेक्षा भिन्न हैं — ऐसा भी नहीं है। यहाँ तो स्वय ही ग्रन्य-ग्रन्य ग्रीर स्वय ही ग्रनन्य हैं — यह वात कही जा रही है।

ग्रहाहा । ग्रपने द्रव्य मे प्रगट होनेवाली प्रत्येक पर्याय का काल ग्रयीत् क्रमानुपाती स्वकाल है। (यह वात गाथा ११३ मे कही जा चुकी है।) जो पर्याय स्वकाल मे क्रमानुसार श्रानेवाली थी, वही पर्याय श्राई है। पूर्व पर्यायो की ग्रपेक्षा से उसे ग्रन्य कहते हैं, परन्तु वस्तु

की अपेक्षा अनन्य है। इसलिए वह पर्याय किसी अन्य से हुई है – ऐसा है ही नही।

भाई । भाषा तो सरल है, परन्तु उसका भाव वैठना कि है; तथापि न बैठे – ऐसा भी नही है। समयसार कलश ६० की पाँडे राजमलजी कृत वालवोधिनी टीका मे ग्राता है कि "ज्ञान भिन्न व क्रोध भिन्न – ऐसा श्रनुभवना वस्तुत कि कि है, पर वस्तु का शुद्ध-स्वरूप विचारने पर भिन्नपनेरूप स्वाद ग्राता है। (ग्रात्मज्ञान होता है।)" भाव बैठना कि तो है, परन्तु द्रव्यसामान्यरूप भगवान श्रात्मा को देखने से श्रन्तर मे भाव बैठ जाता है। भले ही देखनेवाली पर्याय विशेष है, परन्तु वह देखती है सामान्य को। यह पर्याय ऐसा मानती है कि मैं श्रखण्ड एक ज्ञायकस्वरूप विराजमान हूँ। श्रहाहा। इस पर्याय का विषय मात्र पर्याय न रहकर द्रव्य वन जाता है, तब श्रन्तर मे भाव बैठ जाता है।

यहाँ कहते है – वास्तव मे सर्व वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है। इसका यह अर्थ है कि वस्तु किसी अन्य से बनी है या कोई ईश्वर इसका कर्ता है – ऐसा नही है। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य की पर्याय को नही कर सकता। सर्व वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है अर्थात् कायम रहने की अपेक्षा से सामान्यरूप और पलटने की अपेक्षा से विशेषरूप हैं। सामान्य और विशेष – ये दोनो द्रव्य के स्वरूप हैं। आगे भी द्रव्य का स्वरूप दो रूप है – ऐसा आएगा।

प्रश्त .- श्रनुकूल स्त्री और पुत्र के साथ भी श्रात्मा का सम्बन्ध नहीं है क्या ?

उत्तर:-भाई । किसको पत्नी और किसका पुत्र ? जहाँ वस्तु का विशेष भी मात्र एकसमय टिकता है, वहाँ पत्नी-पुत्रादि आत्मा के हैं -यह बात कहाँ रही ? प्रभु । प्रत्येक वस्तु कायम रहने की अपेक्षा ध्रुव है, तो भी उसका विशेष एकसमय मात्र ही टिकता है।

हैं, इसलिये अनन्य भी कहा है, परन्तु ग्रात्मा से पर का तथा परमागु से परमाराषु का परस्पर कोई सम्बन्घ नही है। लोगो को यह बात कठिन लगती है, परन्तु उन्हे विचार करने की फुरसत ही कहाँ है ? सारा दिन घन्घा-व्यापार, कुटुम्ब-परिवार की सम्हाल ग्रौर दुनिया के जजाल मे ही बीत जाता है श्रौर जिन्दगी ऐसे ही ऐसे पूरी हो जाती है।

मूल गाया मे वस्तु को सामान्य और विशेष से देखने की बात कही है परन्तु टीका मे दोनो को साथ मे देखने की बात भी कहेगे।

सर्वप्रथम कहते हैं कि इनमे से पर्यायाधिक चक्षु को सर्वथा बन्द करके । देखो, यहाँ से शुरू किया है। द्रव्यार्थिक को वन्द करके - ऐसी शुरूग्रात नहीं की। द्रव्य को देखने के लिए पर्यायाधिक आँख को सर्वथा बन्द कर दे। गजब बात है भाई ! पर्याय है भ्रवश्य, परन्तु उसकी तरफ देखनेवाली दृष्टि को बन्द कर दे -इसप्रकार वात शुरू की है। पहले तो यह कहा कि वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है। विशेष नहीं है – यह बात कहाँ है ? परन्तु भ्रब विशेष को देखने की ग्रॉल बन्द करके - ऐसा कहा। श्रहाहा ! कथञ्चित् बन्द करके - ऐसा नही कहा, परन्तु पर्यायाथिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके मात्र खुली हुई द्रव्यार्थिक चक्षु द्वारा देखा जाता है - ऐसा कहा। श्रहाहाँ। त्रिकाली द्रव्य को जानना है न? तो विशेष नय की आँख बन्द करके, द्रव्य जिसका प्रयोजन है - ऐसे द्रव्यार्थिक नय की आँख से देख, यह कहा है।

ग्रवस्था को देखनेवाली पर्यायाधिक ग्रांख को बन्द कर दे ग्रीर द्रव्यसामान्य को देखने-जाननेवाली द्रव्यार्थिक आँख से देख, इससे तुभे ग्रवस्था मे द्रव्यसामान्यरूप भगवान-ग्रात्मा ज्ञात होगा ।

त्रवस्था को देखनेवाली श्रांख वन्द करके सामान्य को देखने पर भी, देखनेवाली विशेष पर्याय तो रहेगी, परन्तु देखनेवाली पर्याय का विषय विशेष नही, सामान्य रहेगा।

यहाँ कहते हैं कि विशेष को देखनेवाली पर्यायायिक ग्रांग वन्द कर दे। दूसरे को देखना वन्द कर दे— यह वात तो एक तरफ रही, क्योंकि परपदार्थों को देखनेवाली दृष्टि— पर्यायायिक या द्रव्यायिक नहीं कहलाती। मात्र ग्रपने में दो प्रकार हैं, सामान्यपना ग्रयीत् कायम रहना ग्रीर विशेषपना ग्रयीत् वदलना। इन दोनों को देखने वाली दो ग्रांख है। ग्रव कहते हैं कि विशेष को देखनेवाली ग्रांख को विलकुल वन्द करके खुली हुई द्रव्यायिक ग्रांख में देख। भाई। भारी गजव वात है। थोडे शब्दों में वहुत भरा है।

यहाँ स्त्री, पुत्र, मित्र, घन ग्रादि को देखना वन्द कर दे - ऐसा नहीं कहा, क्योंकि जो स्वरूप में नहीं है, उसकी वात क्यों करें? प्रभुं तेरे स्वरूप मे सामान्य और विशेष - दो पहलू हैं, अब इनमे से विशेष को देखनेवाली ग्रांख सर्वथा वन्द कर दे ग्रीर खुनी हुई द्रव्यार्थिक चक्षु से देख । देखो, विशेष को देखनेवाली ग्राँख क्यञ्चित् वन्द कर दे और कथञ्चित् खुली रख ग्रथवा उसे गौए। कर दे - ऐसा नही कहा। पर्याय को देखना वन्द कर दिया ग्रर्थात् द्रव्य को देखने वाला ज्ञान प्रगट हो गया । द्रव्यार्थिक चक्षु से द्रव्यं को देखनेवाला ज्ञान भी है तो पर्यायरूप, परन्तु उसका विषय द्रव्य है। ग्रहो । यह तो तत्काल सम्यग्दर्शन प्रगट होने की वात है। कितनी गभीर टोका है । भरतक्षेत्र मे ऐसी वात अन्यत्र कहाँ है ? सन्तो ने त्रिलोकीनाथ परमात्मा की दिव्यध्विन मे श्रमृत वरसाया है। जगत का महाभाग्य है कि ऐसी वारगी रह गई। (श्रर्थात् श्राज तक उपलब्ध है।) भाई । ऐसी वाएी सुनने का सौभाग्य मिला और तुभे फुरसत नही है ? भगवान । तुमे कहाँ जाना है, कहाँ रहना है ? इसका विचार तो कर।

पहले कहा कि सर्व वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है। ग्रव कहते हैं कि तुभे ग्रपनी वस्तु को देखना हो तो पर्यायाधिक ग्रांख को सर्वथा वन्द करके, खुली हुई द्रव्याधिक चक्षु से देख । पर्यायाधिक ग्रांख वन्द करके, पर को देख – ऐसा नहीं कहा। यहाँ तो ग्रमृतस्वरूप भगवान ग्रात्मा को देखने की वात है। सन्तो ने तो ग्रमृत वरसाया है, परन्तु ग्ररे। जगत को उसकी दरकार कहाँ है ?

भगवान । तुभ मे सामान्य भ्रौर विशेष – ऐसे दो प्रकार है। यहाँ वात तो सभी द्रव्यो की करना है, परन्तु जीव मे घटित करके समभाया गया है।

श्रमृतचन्द्राचार्यदेव की टीका में स्पष्ट नहीं कहा, परन्तु जयसेनाचार्य की टीका में स्पष्ट कहा है। सर्वद्रव्येषु यथासंभव जातव्यमित्यर्थः — ये जयसेनाचार्यकृत टीका के श्रन्तिम शब्द हैं। भाई । यह तो वैर्यवान पुरुप का काम है। समयसार कलशटीका में कहा है कि निभृत श्रर्थात् स्वरूप में एकाग्र होनेवाले निश्चिन्त पुरुपो द्वारा इस वस्तु का विचार किया जाता है।

पहले 'पर्यायाथिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके' - ऐसा कहकर जोर दिया ग्रीर ग्रव उससे भी ग्रधिक जोर देने के लिए कहते हैं - जब मात्र खुली हुई द्रव्याथिक चक्षु के द्वारा देखा जाता है।

ज्ञान को इसप्रकार खोलकर देख कि द्रव्य दिखाई दे। 'मात्र खुली हुई द्रव्याथिक चक्षु द्वारा' — ऐसा कहा है न ? अर्थात् द्रव्य को देखने वाले प्रगट ज्ञान द्वारा देख । जब पर्याय को देखना वन्द कर दिया, तव स्वद्रव्य को देखनेवाला ज्ञान प्रगट हुआ। द्रव्य को जो नय देखता है — ऐसा नय प्रगट हुआ।

जब पर्यायाथिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके मात्र खुली हुई द्रव्याथिक चक्षु के द्वारा देखा जाता है; तब नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना ग्रौर सिद्धपना – पर्यायस्वरूप विशेषो में रहनेवाले एक जीवसामान्य को देखनेवाले श्रीर विशेषों को न देखनेवाले जीवों को 'वह सब जीवद्रव्य है' – ऐसा मासित होता है।

देखो । देखनेवाली स्वयं पर्याय है, परन्तु वह पर्याय को देखना वन्द करके द्रव्य को देखनेवाले प्रगटज्ञान के द्वारा द्रव्यसामान्य को देखती है। ग्रहाहा । क्या ग्रमृत भर दिया है। ग्रज्ञानी ऐसे ही (भाव समभे विना) पढ जाता है ग्रार मान लेता है कि हमने स्वाध्याय किया। परन्तु भाई । यह प्रवचनसार ग्रर्थात् दिव्यव्विन का सार है, ग्रत्यन्त गहन चीज है। एक भाई समयसार के सम्बन्ध में कहते थे कि महाराज (श्री कानजी स्वामी) समयसार का वहुत वखान करते हैं, परन्तु मैने तो उसे पन्द्रह दिनो में ही पढ लिया। ग्ररे भाई । समयसार बहुत गहन चीज है। प्रभु । मात्र ऐसे ही पढ लेने से उसका रहस्य नही समभा जा सकता।

प्रश्त - श्रीमद् राजचन्द्र ने छह पद कहे है, उनमे सम्यग्दर्शन की न्याख्या की है, तो इन छह पदो को तो देखना चाहिए न?

उत्तर: - भाई । यहाँ तो कहते है कि इन छह पदो के भेद को देखनेवाली ग्रॉख को सर्वया वन्द कर । भाई, यह तो ग्रमृत का घर है। वडी मुश्किल से वाहर ग्राया है, इसलिये इसे घीरज से सावधान होकर सुनना, समभना - ऐसा समय फिर कब ग्राएगा?

ग्रहाहा । कितने गम्भीर भाव भरे है। सामान्य श्रौर विशेष को जाननेवाली दो ग्रॉलें है ग्रयीत् देखनेवाला ग्रात्मा ग्रपने सामान्य श्रौर विशेष को देखता है, परन्तु पर को नही। ग्रपनी विशेष पर्याय मे परपदार्थ ज्ञात होते हैं, परन्तु वास्तव मे तो श्रपनी पर्याय ही ज्ञात होती है। सामान्य श्रौर विशेष को देखनेवाले दो चक्षु कहे है, परन्तु पर की वात नहीं की।

वस्तुस्वरूप को देखनेवालो की श्रनुक्रम से सामान्य श्रीर विशेष को जाननेवाली दो चक्षु हैं, यहाँ 'श्रनुक्रम' शब्द का प्रयोग किया है। पहले सामान्य को जानना, फिर विशेष को जानना, क्यों कि सामान्य का यथार्थ ज्ञान होने पर ही विशेष का यथार्थ ज्ञान होता है। यहाँ पर को जानने की बात नहीं की, क्यों कि आत्मा पर को जानता ही नहीं है। वास्तव में वह अपनी पर्याय में पर्याय को ही जानता है। कितनी सूक्ष्म बात है। पर को जानता है—ऐसा कहना असद्भूतव्यवहारनय है। वास्तव में तो त्रिकाली सामान्य आत्मा के विशेष में विशेष को ही जानना है, पर को नहीं। यहाँ विशेष द्वारा पहले सामान्य को और फिर विशेष को जानने के लिए कहा है, क्यों कि सामान्य को जानने पर जो ज्ञान होता है, वह अपने विशेष को भी यथार्थ जानता है।

सामान्य और विशेष को जाननेवाली दो चक्षु कही है, पर को जाननेवाली तीसरी चक्षु नहीं कहीं। अपने विशेष में परपदार्थ जान लिए जाते है, परन्तु वास्तव में तो अपनी पर्याय ही जानी जाती है। अहो! कितनी गम्भीर टीका है। अनुक्रम शब्द का प्रयोग किया है अर्थात् पहले सामान्य को देखना, फिर विशेष को देखना।

श्रपनी पर्याय मे जो विशेषता ज्ञात होती है, वह श्रपनी पर्याय ही ज्ञात होती है, पर नहीं, इसलिये 'पर को जाननेवाली चक्षु बन्द करके' — ऐसा नहीं कहा, परन्तु श्रपनी पर्याय को जाननेवाली पर्यायाधिक चक्षु सर्वथा बन्द करके — ऐसा कहा है। श्रहाहा । कितनी गम्भीर वस्तु है। प्रवचनसार, समयसार श्रोर नियमसार की एक-एक गाथा श्रति गम्भीर श्रोर श्रलौकिक है।

यहाँ कहते हैं कि भगवान । तू पर को जानता ही नही है। केवली भगवान लोकालोक को जानते है – ऐसा कहना ग्रसद्भूत व्यवहारनय है। भाई। ग्रात्मा ग्रौर पर का सम्बन्ध ही क्या है? स्व ग्रौर पर के बीच ग्रत्यन्ताभाव की ग्रभेद्य दीवार है। स्वद्रव्य की पर्याय ग्रौर परद्रव्य की पर्याय के बीच भी ग्रत्यन्ताभाव जैसी ही ग्रभेद्य

दीवार है। श्रपनी एकसमय की पर्याय मे पर का प्रवेश ही कहाँ है ? टीका मे भी कहा है कि श्रात्मा श्रपने विशेष को जानता है।

सामान्य को जानता है - पहले ऐसा कहकर फिर विशेष को जानता है - ऐसा कहा है। पर को जानता है - यह वात ही नहीं की।

पर्यायायिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके ग्रर्थात् ग्रपनी पर्याय का लक्ष्य छोडकर मात्र खुली हुई द्रव्यायिक चक्षु द्वारा ग्रवलोकन कर। जब पर्याय को देखनेवाली पर्यायायिक दृष्टि वन्द की तो ग्रव कुछ देखनेवाली दृष्टि रही या नही हैं हाँ, द्रव्य को देखनेवाली दृष्टि रही, इसलिये कहा कि मात्र खुली हुई द्रव्यायिक चक्षु द्वारा देख। यह द्रव्यायिकनय प्रगटरूप (पर्यायरूप) ज्ञान है। यद्यपि है तो वह भी पर्याय, तथापि वह पर्याय, पर्याय को न देखकर द्रव्य को देखती है। पर्याय को जाननेवाली चक्षु सर्वथा वन्द की है, परन्तु ज्ञान सर्वथा बन्द नहीं हुग्रा, वह तो उघडा हुग्रा है ग्रीर द्रव्य को जानता है। देखो, कैसी ग्रद्भुत वाते हैं। भाई। यह तो तीन लोक के नाथ की दिव्यवागी है।

भगवन् । तू सामान्य-विशेषस्वरूप है। तेरे विशेष मे पर को जानना है ही नहीं, क्यों कि उसमें अपनी पर्याय ही ज्ञात होती है। अब कहते हैं कि यह जो पर्याय ज्ञात होती हैं, उसे जानने वाली पर्यायिक चक्षु सर्वथा बन्द करने पर देखनेवाला अन्य कोई ज्ञानचक्षु रहा कि नहीं? भाई। द्रव्य को देखनेवाला ज्ञानचक्षु प्रगट उघाडरूप हैं। कहा है न कि मात्र खुली हुई द्रव्यायिक चक्षु द्वारा देख। पर्याय को देखनेवाली आँख सर्वथा वन्द की हैं, परन्तु द्रव्यसामान्य को देखनेवाला ज्ञान तो उघडा ही है। जब पर्याय को देखना सर्वथा वन्द किया, तभी द्रव्य को देखनेवाला ज्ञान प्रगट हो गया, क्योंकि स्वय जाननहारा है। जाननेवाले

की पर्याय में अँघेरा हो जाए अर्थात् जानना ही बन्द हो जाए - ऐसा तो कभी हो ही नही सकता।

ग्रहाहा । पर्याय को देखनेवाली ग्रॉख सर्वथा वन्द कर दे। प्रभु । ऐसा कहकर ग्राप क्या कहना चाहते हैं ? ऐसा प्रश्न होने पर कहते हैं – तुभे शुद्ध त्रिकाली ग्रात्मद्रव्य को देखना है न ? तो उसका ज्ञान पर्याय में होता है, इसलिये कहते हैं कि मात्र खुली हुई द्रव्याधिक चक्षु द्वारा देख। तात्पर्य यह हैं कि पर्याय को देखनेवाली ज्ञान की पर्याय सर्वथा वन्द हो जाने पर जो मात्र द्रव्य को जानती हैं – ऐसी ग्रन्तर के ज्ञान की पर्याय प्रगट हो जाती हैं, उसके द्वारा द्रव्य को देख। ऐसी वात सुनने को ही नहीं मिली, इसलिये एकान्त हैं – ऐसा कहते हैं, परन्तु वापू । यह एकान्त नहीं सम्यक-एकान्त हैं।

सन्त कहते हैं कि वस्तु को नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना और सिद्धपना – इन पाँच पर्यायस्वरूप देखनेवाली पर्याय की ग्रॉख वन्द कर दे। गजव वात है भाई । सिद्धपर्याय को देखने वाली ग्रॉख वन्द कर दे। स्वय को वर्त्तमान मे सिद्धपर्याय नहीं है, परन्तु श्रद्धा मे हैं कि मेरी सिद्धपर्याय प्रगट होगी, इसलिये कहते हैं कि सिद्धपर्याय को देखनेवाली ग्रॉख भी वन्द कर दे।

समयसार मे विन्दित्तु सन्विसिद्धे कहकर ज्ञानपर्याय मे सर्व सिद्धों की स्थापना की है और यहाँ कहते है कि सर्व सिद्धों को जानने वाली पर्याय को देखनेवाली पर्यायाधिक आँख वन्द कर दे और मात्र खुली हुई द्रव्याधिक चक्षु द्वारा देख। अहो। यह तो सन्तों के हृदय की अथाह गहराई है। क्या कहे लैसा गहनभाव भासित होता है, वैसा भाषा में नहीं आ सकता। यदि कोई ऐसा अभिमान करे कि हमने पढा है, हमें आता है तो उसका गर्व उतर जाए — ऐसी बात है।

भाई । ग्रपनी पर्याय को देखनेवाली ग्रॉख वन्द कर दे, फिर भी देखना तो चालू रहेगा। जहाँ पर्याय को देखना सर्वथा वन्द किया, वहाँ तुरन्त ही द्रव्य को देखनेवाला ज्ञान प्रगट हुआ। यह ज्ञान ग्रपने पुरुषार्थ से प्रगट हुआ है। जब खुली हुई द्रव्यायिक चक्षु द्वारा देखा जाता है, तब नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना ग्रीर सिद्धपना — इन पर्यायस्वरूप विशेषों में रहनेवाले एक जीवसामान्य को ही देखा जाता है। पर्याय में दूसरी कोई चीज नहीं है, इसलिय देव-शास्त्र-गुरु और सिद्धों को भी निकाल दिया, मात्र सिद्धपना ग्रादि पर्यायों में रहनेवाले जीवसामान्य की वात की।

वहाँ देखने-जाननेवाली पर्याय रही कि नही ? हाँ, रही। जीवसामान्य को देखनेवाला द्रव्यायिकनय तो पर्याय ही है, परन्तु वह पर्याय को नही देखता, द्रव्यसामान्य को देखता है। भाई ! ऐसा कभी सुना नही, इसलिये नया लगता है, परन्तु यह तो भगवान त्रिलोकनाथ की ग्रात्मस्पर्शी वागी है।

प्रश्त: - 'एक जीवसामान्य को देखनेवाले' - ऐसा कहा है। यह 'सामान्य' क्या है ?

उत्तर: सामान्य ग्रर्थात् वदले विना कायम रहनेवाला ग्रखण्ड एकरूप त्रिकाली ग्रात्मद्रव्य । भाई । सारे दिन व्यापार-धन्धे मे फँसे रहने से तुभे यह वात सूक्ष्म लगती है, परन्तु यह वात समभने के लिए विशेष समय निकालना चाहिए, यह तो तेरे हिन की वात है।

परपदार्थों को देखना तो दूर रहा, देव-गुरु-जास्त्र तथा सिद्ध-पर्याय को देखनेवाली ग्रांख भी वन्द करके, खुली हुई द्रव्यार्थिक चक्षु द्वारा देखा जाए तो नारकपना ग्रादि पर्याय-विजेपों में रहनेवाले एक जीवसामान्य को देखनेवालों को ग्रांर विजेपों को नहीं देखनेवाले जीवों को 'वह सब जीवद्रव्य हैं' — ऐसा भासित होता है। ग्रहाहा। वह सब जीवद्रव्य हैं — ऐसा भासित होता है ग्रर्थात् पर्याय-विशेष या भेद भासित नहीं होते, परन्तु उन विशेपों में रहनेवाला ग्रनन्त-ग्रनन्त पूर्णशक्तियों का सागर, ग्रखण्ड, एकरूप, भगवान ग्रात्मा भासित होता है। यह भाषा साधारण लगती है, परन्तु इसमे भरे हुए भाव वहुत गभीर और गहरे है। प्रवचनसार, नियमसार व समयसार की तो वात ही क्या करना ? भरतक्षेत्र मे यह वात अन्यत्र कही नही है। भाई ! जो इसप्रकार पुरुषार्थ करे, उसे वस्तु प्राप्त हुए विना नही रहे। 'सव जीवद्रव्य है' – ऐसा भासित होता है अर्थात् ज्ञात होता है।

पर्याय को देखनेवाली दृष्टि को सर्वथा बन्द करने पर नारकपना ग्रादि पाँच पर्यायों में रहनेवाला जीवसामान्य ही दिखाई देता है। पर में या पर की पर्यायों में तो व्यवहार से भी जीवद्रव्य नहीं रहता, परन्तु ग्रपनी नारकादि पाँचों पर्यायों में रहता है। ऐसे जीवसामान्य को देखनेवालों को 'वह सब जीवद्रव्य है' — ऐसा भासित होता है ग्रार्थात् उक्त प्रकार से देखने पर जीवद्रव्य ही भासित होता है।

प्रश्न - प्रभु । इस निकृष्ट पचमकाल मे भी जीवद्रव्य भासित

होता है क्या ?

उत्तर: प्रभु । स्रात्मा को कोई काल वाधक नहीं होता। स्ररे । जहाँ उसे पर्यायाधिक नय भी लागू नहीं पडता, फिर काल की वात कहाँ रही ? यद्यपि स्रागे पर्यायाधिक नय से देखने की बात करंगे, परन्तु यहाँ पहले द्रव्याधिक नय से देखने की वात की है।

प्रश्न :- द्रव्याधिक नय से द्रव्य को देखने के पश्चात् ही पर्याय

का सच्चा ज्ञान होता है न ?

उत्तर: पर्याय का ज्ञान कव सच्चा होगा? – यह वात यहाँ नहीं है। यहाँ तो पर्याय की ग्रांख वन्द करके द्रव्य को देखने की वात है। 'जीवद्रव्य पाँचो पर्यायों में रहनेवाला ग्रखण्ड एकरूप तत्त्व है' – इसप्रकार देखनेवाला ज्ञान सच्चा है। 'वह सब जीवद्रव्य है' – ऐसा भासित होता है, इस वात पर वजन है। पर्यायाधिक नय से पर्याय भासित होती है – ऐसा भी कहेगे, परन्तु ऐसा तो पर्याय का ज्ञान कराने के लिए कहेगे। यहाँ तो द्रव्याधिक नय से देखने की वात से प्रारम्भ किया है। प्रभु! तू अपनी पाँचो पर्यायों में रहता है, फिर भी पर्याय को देखनेवाली आँख वन्द करके उघडे हुए द्रव्यार्थिक नय की चक्षु से तू जो वस्तु है, उसका अवलोकन कर! तव तुभे 'वह सव जीवद्रव्य है' — ऐसा भासित होगा, तव ही तुभे अनन्त-अनन्त शक्तियों का अभेद एकस्वरूप पूर्ण परमात्मा ज्ञात होगा। अज्ञानी जीव ऐसी वात शान्ति से — घैर्य से वाँचे नही, विचारे नहीं, और कहते हैं कि एकान्त है, परन्तु भाई । जैसा परिगाम करेगा, उसका वैसा ही फल तो होगा। असत्य का तो असत्य परिगाम ही आएगा।

मात्र खुली हुई द्रव्यार्थिक चक्षु द्वारा पाँचो पर्यायस्वरूप विशेषों में रहनेवाला जीवद्रव्य दिखाई देता है। देखों। भले विशेष को देखनेवाली आँख वन्द कर दी, परन्तु जीव विशेषरहित नहीं है, वह तो विशेषों में रहनेवाला सामान्य है। गजव वात है भाई। जीवद्रव्य परपदार्थों में तो नहीं रहता, परन्तु अपनी पाँचो पर्यायों में रहता है। इसप्रकार सिन्ध करके आचार्यदेव कहते हैं कि पर्यायस्वरूप विशेषों में रहनेवाले एक जीवसामान्य को देखनेवाले तथा विशेषों को नहीं देखनेवाले जीवों को 'वह सव जीवद्रव्य है' — ऐसा भासित होता है।

देखनेवाली स्वय तो पर्याय है, परन्तु देखती है द्रव्य को। समयसार गाथा ३२० की जयसेनाचार्य की टीका मे आता है "सकल निरावरण, ग्रखण्ड, एक, प्रत्यक्ष प्रतिभासमय, ग्रविनश्वर, शुद्ध-पारिणामिक, परमभावलक्षण, निजपरमात्मद्रव्य ही में हूँ" — ऐसा पर्याय जानती है, क्योंकि जानने का कार्य द्रव्य मे नही, पर्याय मे होता है, इसलिए पर्याय ऐसा जानती है कि मैं निजपरमात्मद्रव्य हूँ। भले विशेषों मे रहता हूँ, परन्तु हूँ यह सामान्य ही। ३२० गाथा के समान यहाँ भी यही वात कही है कि जीवसामान्य को देखनेवाले श्रीर विशेषों को नहीं देखनेवाले जीवों को 'वह सव जीवद्रव्य है' — ऐसा भासित होता है।

पर्यायाधिक नय तो वन्द हो गया है, ग्रत खुली हुई द्रव्याधिक नयम्प ज्ञानपर्याय, पर्यायविशेषो मे रहनेवाले एक जीवसामान्य को देखनी है। ग्रहाहा । दो-तीन पक्तियों में कितना सार भर दिया है। ग्रहो । केवली भगवान के ग्राडितया दिगम्बर सन्तो की वाणी मे श्रगोध गहराई है <sup>।</sup> भगवान का तो विरह हो गया, परन्तु यह वा**गी** रह गई (ग्रथीन् ग्राज तक उपलब्ध है), इस वासी ने भगवान का विरह भूना दिया । पर्यायनय के वन्द हो जाने पर श्रन्दर विराजमान एकम्प तत्त्व को जाननेवाला ज्ञान खुल जाता है। जब पर्याय पर दृष्टि थी, तब द्रव्य को जाननेवाला ज्ञान श्रस्त था। श्रव पर्याय यो देग्ना सर्वथा वन्द किया तो ग्रन्तस्तत्त्व को देखनेवाला ज्ञान खुल गया। उस खुले हुए ज्ञान द्वारा विशेषो मे रहनेवाले जीवसामान्य को देखनेवाले ग्रीर विशेषो को नहीं देखनेवाले जीवो को 'वह सव जीवद्रव्य है' - ऐसा भासित होता है। ग्ररे प्रभु । यह तो भागवत् कथा है, उसकी अगावता के सामने क्षयोपणमज्ञान का क्या अभिमान करना ? ग्ररे । जब सन्त इमकी व्यास्या करते होगे, तब इसकी व्यान्या का पार भी नहीं मिलता होगा। भाई । भगवान ने जितना श्रपने ज्ञान मे देखा, उसका श्रनन्तर्वा भाग दिव्यध्वनि मे कहा गया श्रीर जितना कहा गया, उतना भी भेला नही जा सका।

कहा भी है -

मुख श्रोकार घुनि सुनि, श्रथं गणधर विचारे, रचि श्रागम उपदिशे, भविक जीव संशय निवारे।

ग्रहाहा । यह वान दिन्यध्विन के श्रनुसार श्रागम मे श्राई हुई है, श्रार जो उमे जानता है, उसे सणय नही रहता। द्रव्य को जाननेवाले खुले हुए ज्ञान द्वारा जब विशेषों मे रहनेवाले शुद्ध सामान्यजीव को जाना; तब सणय नही रहता, मिथ्यात्व का श्रश भी नही रहता।

एक जीवसामान्य को देखनेवाले श्रीर विशेषों को नहीं देखने वाले जीवों को — इस वाक्याण में 'जीवों' कहकर वहुवचन का प्रयोग किया है श्रर्थात् वर्त्तमान पचमकाल में पर्यायचक्षु को वन्द करके खुले हुए द्रव्यार्थिक चक्षु से देखनेवाले श्रनेक जीव सम्भावित हैं। पचमकाल के सन्त पचमकाल के श्रोताश्रों से यह वात कहते हैं श्रर्थात् पचमकाल में भी श्रनेक जीव श्रपने शुद्ध विकाली द्रव्य को देखेंगे। श्राचार्य श्रपने श्रोताश्रों से यह नहीं कहते कि तुम से यह काम नहीं होगा; इसलिये भाई। मेरी समक्त में नहीं श्राता — यह वान छोड़ दे। प्रभु । जहाँ पर्याय को भी देखना वन्द करना है, वहाँ 'मैं यह नहीं जान सकता' — यह प्रश्न ही नहीं उठता। पर्याय को देखनेवाला ज्ञान सर्वथा वन्द करके जब द्रव्य को देखनेवाले ज्ञान द्वारा देखेगा, तभी तुक्ते सम्पूर्ण भगवान दिखेगा, श्रपने भगवान से तेरी भेट होगी। तेरा भगवान गुप्त नहीं रहेगा।

ग्रहाहा । एक जीवसामान्य को देखनेवाल ग्रांर विशेषो को नहीं देखनेवाल जीवो को — इसप्रकार वहुवचन प्रयोग करके पचमकाल के सन्त पचमकाल के ग्रपने श्रोताग्रो से कहते है कि 'भगवन् । तू विश्वास ला । तुभमे ग्रनन्त सामर्थ्य है । तू ग्रनन्त वीर्य से भरा हुग्रा भगवान है । ग्रतीन्द्रिय सुखामृत का सागर है । तू स्त्री, पुरुष या नपुसक नहीं है, ग्रत शरीर को मत देख । ग्राकृति को मत देख ! पर को मत देख ! ग्ररे, तुभे वाहर कहाँ देखना है ? ये सव तेरी जिस पर्याय मे ज्ञात हो रहे हैं, उस पर्याय को भी देखनेवाली ग्रपनी पर्यायचक्षु को बन्द कर दे ग्रीर खुल हुए ज्ञान द्वारा द्रव्य को देख — इससे तुभे ग्रनन्त सुख का समुद्र भगवान ग्रात्मा मिलेगा, तू निहाल हो जाएगा। ग्रहाहा । ग्रद्भुत वात है।

ग्रनेक जीवो को द्रव्य को देखनेवाली खुली हुई ग्रॉख से 'यह सव जीवद्रव्य है' - ऐसा भासित होता है। पर्याय को देखनेवाली श्रॉख पूरी वन्द कर दी, तव द्रव्य को देखनेवाली श्रॉख से श्रतीन्द्रिय सुख का सागर, निर्मलानन्द प्रभु, ग्रात्मा ज्ञात होता है श्रर्थात् श्रात्मद्रव्य इन्द्रियगम्य नही, विकल्पगम्य नही तथा पर्यायार्थिक नय द्वारा भी गम्य नही, मात्र खुली हुई द्रव्यार्थिक चक्षु द्वारा ज्ञात होने योग्य तत्त्व है।

पहले पर्यायदृष्टि के समय द्रव्य को देखनेवाला ज्ञान बन्द था। अवस्थाओं को ही देखनेवाली अपनो दृष्टि अपने स्वभाव को नहीं देखती थी। इसलिये कहा कि पर्याय को देखनेवाली आँख सर्वथा वन्द कर दे। पर्याये अपने-अपने कम मे निश्चित समय मे होगी ही, परन्तु उन नारकादि पर्यायों को देखनेवाली आँख सर्वथा वन्द कर दे। इसका मतलव यह नहीं कि देखना ही सर्वथा वन्द हो गया। पर्याय को देखना वन्द किया तो तुरन्त ही द्रव्य को देखनेवाले द्रव्यार्थिक नय का ज्ञान खुल जाता है और उसमे पूर्णानन्द का नाथ चित्चमत्कार प्रभु आत्मा ज्ञात होता है। दिगम्वर धर्म के सिवाय अन्यत्र ऐसी बात कहाँ है अऔर सब जगह तो बाह्य क्रियाकाण्ड की वाते है, परन्तु भगवन् । जिससे भव का अन्त न हो, उससे क्या लाभ जिसप्रकार आत्मवृष्टि विना ५४ लाख योनियों के अवतार मे नरकादि के जो हु ख तूने भोगे है, उनका वर्णन तू नहीं सुन सकता, उसीप्रकार अपने को देखने से जो आनन्द आता है, उसकी भी वात क्या करना उसका वर्णन भी नहीं किया जा सकता।

ग्रहाहा । जब द्रव्याधिक चक्षु द्वारा त्रिकाली एकरूप द्रव्य ज्ञात होता है, तव पर्याय को जाननेवाला यथार्थ ज्ञान प्रगट होता है। पहले ऐसा नहीं कहा कि द्रव्याधिक नय को वन्द करके पर्याय को देख, परन्तु पर्यायाधिक नय की चक्षु सर्वथा वन्द करके द्रव्याधिक चक्षु द्वारा देख — ऐसा कहा है, क्योंकि द्रव्य का यथार्थ स्वरूप भासित होने पर ही पर्याय यथार्थरूप से भासित होती है। अव कहते हैं कि जब द्रव्यायिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके मात्र खुली हुई पर्यायायिक चक्षु के द्वारा देखा जाता है; तव जीवद्रव्य में रहनेवाले नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना और सिद्धपना पर्यायस्वरूप भ्रतेक विशेषों को देखनेवाले भ्रीर सामान्य को न देखनेवाले जीवो को (वह जीवद्रव्य) भ्रत्य-भ्रत्य भासित होता है।

देखो । द्रव्य का ज्ञान तो हुग्रा है। यह सव सामान्य है, द्रव्य है, वस्तु है – ऐसा ज्ञान होने पर उस तरफ देखना वन्द करके ग्रर्थात् उस तरफ का लक्ष्य छोडकर ऐसा क्यो कहा वियोक पर्याय भी अपनी है न पर्याय द्रव्य मे – ग्रपने मे है, ग्रत उसे देखने के लिए द्रव्यार्थिक नय की चक्षु वन्द करने के लिए कहते है।

वहुत सूक्ष्म वात है भाई । यह तो केवलज्ञान को पाने की तैयारीवाले दिगम्बर सन्तो की वागी है। इतनी सत्य वात ग्रन्यत्र कहाँ है किठन पड़े, परन्तु क्या करे वस्तु का स्वरूप ही ऐसा है।

पहले पर्यायाधिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके द्रव्याधिक चक्षु द्वारा द्रव्य को देखने की वात कही थी। ग्रव पर्याय का ज्ञान कराना है, इसलिए द्रव्याधिक चक्षु को सर्वथा वन्द करके पर्यायाधिक चक्षु से देखने की वात कहते हैं। पर्याय भी द्रव्य की है, द्रव्य में है, जीवद्रव्य पर्याय में रहा हुग्रा है, पर्याय में वर्त्त रहा है, इसलिए यहाँ पर्याय का ज्ञान कराना है। पर को जानने की तो वात ही नही है, क्यों कि परद्रव्य का तो स्वद्रव्य से कोई सम्वन्घ ही नही है। ग्ररे जिस पर्याय में परपदार्थ ज्ञात होते है, वह पर्याय भी स्वद्रव्य की है, उस पर्याय का परद्रव्य के साथ कोई सम्वन्घ नहीं है। वज्यवृपभनाराच सहनन के कारण भगवान को केवलज्ञान हुग्रा — ऐसा नहीं है।

यहाँ कहते हैं कि खुली हुई पर्यायाधिक चक्षु द्वारा पर्याय को देख । पर्याय को देख । जैसे – द्रव्य को देख नेवाला

ज्ञान है, वैसे पर्याय को देखनेवाला ज्ञान भी है। जब द्रव्य को देखनेवाली द्रव्याधिक चक्षु वन्द हुई, तब पर्याय को देखनेवाली पर्यायाधिक चक्षु गुली है। इसलिए कहा है कि द्रव्याधिक चक्षु को सर्वया वन्द करके अर्थात् द्रव्य की तरफ का लक्ष्य छोडकर पर्यायाधिक चक्षु द्वारा देख। नारकादि पाँचो पर्याये जीवद्रव्य मे रही है, परपदार्थों मे नहीं, अत यहाँ 'जीवद्रव्य मे रहनेवाले नारकपना' — ऐसा जब्द है अर्थात् पर्याय स्वद्रव्य मे रहनेवाली है, परद्रव्य के साथ उनका कोई नम्बन्ध नहीं है। देखों। ऐसा उपदेश है। अपरिचित व्यक्ति या कियाकाण्ड के आग्रहवाले को ऐसा लगे कि यह क्या कह रहे हैं। तेरा घर कैसा है? कितना महान है? यह कभी तूने सुना नहीं, जाना नहीं।

द्रव्यायिक नय के चक्षु को सर्वथा वन्द करके अर्थात् उस तरफ लक्ष्य नहीं है, उघडी हुई पर्याय की ओर लक्ष्य है। यहाँ उघडी हुई पर्यायायिक चक्षु द्वारा जीव की अवस्थाओं को देखने की वात है।

ग्रहाहा । ग्रपने सामान्य ग्रीर विशेष को ही देखना है, वाहर कही नही देखना है। भगवन् । तेरे द्रव्य ग्रीर पर्याय सिवाय शरीर, कर्म, कपाय इत्यादि वाहर का करना (ग्रथीत् पर का करना) तो ग्रणक्य है, ग्ररे इन्हे देखना भी नही है। भगवन् । पर्यायाधिक चक्षु से तू जो देख रहा है, वह तेरी पर्याय है।

जिसप्रकार यह वाह्य श्रीदारिक शरीर है, उसीप्रकार परम-पारिगामिकस्वभावभावरूप चैतन्यभगवान चैतन्यशरीर है। शास्त्र में 'विग्रह' शब्द श्राता है। विग्रह श्रर्थात् शरीर तीन प्रकार के हैं। (१) चैतन्यशरीर, (२) कपायशरीर श्रीर (३) जडशरीर। श्रीदारिक, तैजस, कार्माण, श्राहारक श्रीर वैक्रियक श्रादि सव जडशरीर है। जीव की पर्याय में होनेवाले पुण्य-पापरूप विकारी परिगाम, नारकादि गितियों के उदयभाव श्रादि एव चैनन्य के विकृत शरीर श्रर्थात् कषाय- शरीर है। शुद्ध त्रिकाली ज्ञायकभाव निजशरीर है, निजवस्तु है। इस निजचैतन्यवस्तु को देखने के लिए एक वार तो पर्याय की ग्रांख वन्द कर।

स्व को देखा है, जाना है, पर्याय में भी स्व-सामान्य वर्त्त रहा है, अत पर्याय को देखने के लिए स्व का — द्रव्यसामान्य का लक्ष्य छोड़कर पर्याय को देखनेवाली चक्षु द्वारा देखने के लिए कहते हैं। तेरी पर्याय के अस्तित्व में औदारिकादि शरीर का एक अश भी नहीं है, तेरी पर्याय के अस्तित्व में तो चार गितयाँ तथा सिद्ध पर्याय हैं। 'जीवद्रव्य में रहनेवाली' — ऐसे शब्दो का प्रयोग किया है न ? तेरी पर्याय में जो नारकादि पर्यायों का अस्तित्व है, उसे देखनेवाली पर्यायाँथक चक्षु द्वारा जान ! लोगों को तो वाहर से धर्म करना है, परन्तु भाई! वाहर तेरा अस्तित्व ही नहीं है, फिर वाहर से धर्म कैसे होगा ? यह वात सुनने की भी फुरसत नहीं है तो निर्ण्य कहाँ से करेगा ?

नारकादि गतियाँ पर्याय के ग्रश मे है, ग्रपनी त्रिकाली चीज में नहीं हैं। दया, दान, भक्ति ग्रादि मदकपाय के परिएगम भी ग्रपनी पर्याय में है, परन्तु ग्रपनी त्रिकाली वस्तु में नहीं हैं। जब निज परमात्म-स्वरूप, त्रिकाली, चैतन्यमय, जीववस्तु का ज्ञान हुग्रा, तभी पर्याय को देखनेवाला ज्ञान भी खुल गया। वह ज्ञान शास्त्र पढ़ने से खुला है—ऐसा नहीं है। जीवसामान्य—त्रिकाल, ज्ञायकमूर्ति, प्रभु ग्रात्मा को जानने पर पर्याय को देखनेवाला ज्ञान खुल गया है। भाई। एकभवावतारी इन्द्र भी खरगोश के समान विनम्रता से वैठकर जिनकी वाएगी सुनते हैं—ऐसे त्रिलोकीनाथ जिनेन्द्र परमेश्वर की यह वाएगी है। इसकी गम्भीरता की वात क्या करे?

जव पर्याय को देखनेवाली श्रॉख वन्द की, सर्वथा वन्द की, तव तो द्रव्याथिक चक्षु द्वारा देखा गया, परन्तु श्रव खुले हुए पर्यायाथिक ज्ञान से जीव मे रहनेवाली पर्यायो को देख। खुली हुई पर्यायायिक चक्षु द्वारा नारकादिपर्यायस्वरूप विशेषो को देखनेवाले श्रीर सामान्य को नहीं देखनेवाले (सामान्य की श्रीर लक्ष्य नहीं करनेवाले) जीवो को वह जीवद्रव्य श्रन्य-श्रन्य भासित होता है।

जीवद्रव्य मे वे पर्याये अन्य-अन्य भासित होती है। देवपर्याय जुदी, सिद्धपर्याय जुदी - इसप्रकार अन्य-अन्य भासित होती है।

द्रव्य उन-उन विशेषों के समय उन-उन विशेषों से तन्मय होने र से श्रनन्य है - कण्डे, घास, पत्ते श्रौर काष्ठमय श्रग्नि की मांति।

उन-उन विशेषो अर्थात् नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना और सिद्धपना — इन पर्यायो मे उस-उस काल मे जीवद्रव्य तन्मय है, परन्तु औदारिक शरीर, स्त्री, परिवार, मकान, पैसा आदि के साथ अशमात्र भी तन्मय नही है, क्योंकि ये सब जीव से पृथक् वाह्य वस्तुएँ हैं।

कुछ लोग कहते है कि ऐसी वाते समफने के लिए तो बाबा (साधु) वनना पड़ेगा। परन्तु भाई दिह और रागादि से भिन्न होने के कारण ग्रात्मा वावा ही है। भाई तेरे त्रिकाली सामान्य स्वभाव मे चार गितयाँ तथा रागादि नही है, परन्तु यहाँ तो पर्याय का ग्रस्तित्व सिद्ध करना है, क्योंकि पर्याय परपदार्थों के कारण नहीं है। 'जीवद्रव्य मे रहनेवाली' — ऐसा कहा है, 'जीव की पर्याय मे रहनेवाली' — ऐसा नहीं कहा, क्योंकि जीवद्रव्य उन-उन पर्यायों से तन्मय है। पर्यायदृष्टि से जीवद्रव्य स्वय पर्याय में ही है और पर्यायाधिक नय से ग्रन्य-ग्रन्य भासित होता है। जीवसामान्य की दृष्टि से देखने पर, वहीं का वहीं ग्रर्थात् ग्रनन्य भासित होता है ग्रीर पर्याय-दृष्टि से देखने पर ग्रन्य-ग्रन्य भासित होता है। भाई यह जन्म-मरण से रहित होने की वात है। जैसे — ग्राकाश में बिजली की चमक होने पर धागे में मोती पिरोना हो तो पिरो ले, यह मनुष्य भव

तो विजली की चमक जैसा ही क्षिणिक है, जिनवाणी का योग अति दुर्लभ है।

त्रिकाली सामान्य तो श्रनन्य (एकरूप) ही है, वह श्रन्यरूप भासित नहीं होता; परन्तु यहाँ तो सामान्य को देखनेवाले को श्रपने विशेष को देखनेवाला ज्ञान खुला है — खिला है। पर्याय को देखनेवाले ज्ञान से देखने पर, विशेषों को देखनेवाले श्रीर सामान्य को नहीं देखनेवाले जीवों को वह (जीवद्रव्य) श्रन्य-श्रन्य भासित होता है, क्योंकि द्रव्य उन-उन विशेषों के काल में उनसे तन्मय है। श्रहाहा ! परमस्वभावभाव, ज्ञायकभावरूप द्रव्य उन-उन विशेषों के काल में उनसे तन्मय है; परन्तु शरीर, मन, वाग्गी, इन्द्रियाँ, स्त्री, कुटुम्व-परिवार, वाग-वँगला श्रादि में कभी तन्मय नहीं होता, हों भी नहीं सकता। फिर भी श्रज्ञानी जीव श्रनन्तकाल से इन्हीं में तन्मय होंकर इन्हें श्रपना मान रहे है। भाई । जो चीज तेरी पर्याय में भी नहीं है, तू उसे श्रपनों मानकर उसी की सभाल में श्रभी भी समय गँवा रहा है। तुभे क्या करना है? कहाँ रहना है? — इसका निर्ग्य तो कर। क्या तुभे श्रपने ऊपर दया नहीं श्राती? श्रनन्तकाल से तो चार गित में रखड रहा है।

प्रश्न: - एक ग्रोर तो ग्राप कहते हैं कि त्रिकाली सामान्य वस्तु परमस्वभावभाव, शुद्धज्ञायकभाव मे गित नही, गुराभेद भी नही है, ग्रीर यहाँ कह रहे हैं कि द्रव्य उन-उन विशेषों के काल मे तन्मय है - इन विरुद्ध कथनो का क्या ग्राशय है ?

उत्तर: - भाई । परमस्वभावभाव शुद्धज्ञायकभावरूप त्रिकाली समान्यवस्तु की दृष्टि कराने के लिए कहते हैं कि उसमे गति नहीं है, गुर्गभेद भी नहीं है, पर्याय भी नहीं है, ग्रौर यहाँ वे विशेष उस काल में उस द्रव्य के हैं - यह ज्ञान कराने के लिये कहते हैं कि उन-

उन विशेपो के काल में द्रव्य उनमें वर्त्त रहा है। जहाँ जो भ्रपेक्षा हो, उसे यथार्थ समभना चाहिए।

द्रव्य उन-उन विशेषों के काल में तन्मय होने के काए उन-उन विशेषों से श्रनन्य है। मनुष्यगतिरूप पर्याय में जीवद्रव्य तन्मय है। मनुष्यगति अर्थात् मनुष्यशरीर नहीं, गतियोग्य उसकी श्रवस्थाविशेष हों मनुष्यगति है। मनुष्य के योग्य गति की योग्यता में जीवद्रव्य तन्मय है। उन-उन विशेषों के काल में तन्मय होने से द्रव्य उनसे श्रनन्य है श्रर्थात् जीवद्रव्य उस काल में विशेषों से जुदा नहीं है।

भगवान कुन्दकुन्दाचार्यदेव जगत के सामने भगवान की वाणी का रहस्योद्घाटन करते हैं। भाई । तुक्षमे सामान्य श्रौर विशेष दो भाग है, इसके अलावा तीसरा कुछ भी (परद्रव्य का श्रश भी) त्रिकाल श्रौर त्रिलोक मे भी तुक्षमे नही है। जिसकी व्यवस्था श्रौर सम्हाल मे तू रुका हुश्रा है — ऐसे गरीर, वाणी, कुटुम्व श्रादि का एक ग्रग भी तुक्ष मे नही है। श्रहाहा । शरीर को सम्हाल के रखूँ, श्रनुकूल भोजन करूँ, ऐसी भाषा वोलूँ, परिवार को सगठित रखूँ — इसप्रकार परद्रव्य की व्यवस्था का श्रीभप्राय मिथ्या है, क्योंकि यह व्यवस्था तुक्षमे नही होती, तू पर का कुछ कर ही नही सकता। फिर भी भगवन् । तू इसमे मूछित हो रहा है। तुक्षे क्या करना है प्रभु निया तुक्षे रखडना ही है ?

प्रश्न - शरीरमाद्यं खलु घर्मसाधनम् - ऐसा कहा है न ?

उत्तर - यह तो निमित्त का कथन किया है। वास्तव में तो राग से भिन्न पडना ही घर्म का साधन है। प्रज्ञा-ब्रह्मस्वरूप परमात्म-द्रव्य की दृष्टि ख्रांर श्रनुभव करना ही साधन है। प्रज्ञा-ब्रह्मस्वरूप परमात्मद्रव्य का ज्ञान तो है, परन्तु साथ में मनुष्यपनारूप जो गित है, उसका भी ज्ञान है। मनुष्यगित में से देवगित में जाएगा, क्योंकि धर्मात्मा को तो मनुष्यगित से देवगित होती है। वहाँ भी जीवद्रन्य उस देवगतिरूप विशेष मे तन्मय होगा। इसप्रकार द्रव्य विशेषो से तन्मय है, ग्रत ग्रनन्य है, ग्रन्य नहीं है।

ग्रहाहा । खुली हुई पर्यायायिक चक्षु द्वारा देखने पर जीव भ्रन्य-श्रन्य भासित होता है, क्योंकि उन-उन विभेषों के काल में द्रव्य तन्मय है। एक पर्याय के समय दूसरी पर्याय नहीं है, नारक पर्याय के समय मनुष्य पर्याय नहीं है तथा सिद्ध पर्याय के समय नरक या मनुष्य पर्याय नहीं है। एकसमय में एक ही पर्याय है, इसलिए अन्य-भ्रन्य पर्यायों की अपेक्षा जीव अन्य-अन्य भासित होता है, क्योंकि वह उनमें तन्मय है।

देखों ! क्षायिक सम्यग्दृष्टि श्रिएाक राजा इस समय प्रथम नरक मे हैं। वे वहाँ के सयोगों में तन्मय नहीं है, ग्रिपितु नरकगतिहप वर्त्तमान पर्याय में तन्मय हैं, उस-उस काल में वर्त्तमान जितनी ही तन्मयता है — यह घ्यान रखना चाहिए। वे स्वय सम्यग्दृष्टि हैं न ? इसलिए गित को ग्रपने स्वरूप से भिन्न जानते हैं, परन्तु उस दृष्टि के साथ में पर्याय को देखनेवाला जो ज्ञान उनको है, वह जानता है कि यह नरक पर्याय मेरी है ग्रीर में इस समय इसमें तन्मय हूँ। वे नरक से निकल कर क्षायिक सम्यक्तव ग्रीर तीन ज्ञान के साथ माता के पेट में ग्रानेवाले हैं, तीर्थंकर होनेवाले हैं। वे जानते हैं कि यह पर्याय मुक्तमे है ग्रीर इससमय में उसमें तन्मय हूँ। यहाँ पर्यायाधिक नय की वात है — यह घ्यान रखना चाहिए। द्रव्याधिक नय से तो द्रव्य में गित ही कहाँ है ?

कण्डे, तृरा, पत्ते श्रौर काष्ठ की श्राग्न के समान, द्रव्य विशेषों से तन्मय होने के कारण उन विशेषों से श्रनन्य है। जैसे तृरा, काष्ठ इत्यादि की श्राग्न उस-उस समय तृरामय, काष्ठमय श्रादि होने के कारण तृरा, काष्ठ श्रादि से श्रनन्य है। उसीप्रकार द्रव्य उन-उन पर्यायरूप विशेषों के समय उन-उनमय (तन्मय) होने के कारण

उनसे अनन्य है, भिन्न नहीं है। काष्ठ की अग्नि स्वय काष्ठरूप परिएामी है न ? इसलिये काष्ठमय है। इसीप्रकार जीव भी स्वय पर्यायोरूप – गति आदि रूप परिएामा है, इसलिए उन पर्यायो – विशेषों से अनन्य है। अहाहां। जिसने अपनी त्रिकाली वस्तु को जाना है, उसने अपनी पर्याय को भी जाना है और उस काल मे उस पर्याय में स्वय तन्मय है – ऐसा जाना है। यह पर्याय कोई परद्रव्य में हुई है – ऐसा नहीं है।

प्रश्न .- समयसार गाथा ६५-६६ मे ऐसा कहा है कि जीवस्थान के चौदह भेद नामकर्म के करण के कारण हुए हैं ? नामकर्म करण है श्रौर वे चौदह भेद उसके कारण हुए हैं ?

उत्तर - भाई! वहाँ ग्रखण्ड एक शुद्ध चैतन्यमय वस्तु भगवान ज्ञायक का लक्ष्य कराना है, शुद्ध निर्मलानन्दस्वरूप प्रभु श्रात्मा का स्वरूप बताना है, इसलिए वे चौदह भेद ग्रात्मा मे नहीं हैं — ऐसा कहा; जबिक यहाँ उसकी पर्याय के ग्रश मे जितना नारकपना ग्रादि है, उसका ज्ञान कराना है, इसलिए जीवद्रव्य उनमे उस समय तन्मय है — ऐसा कहा है। मनुष्यपना ग्रर्थात् यह शरीर नहीं, ग्रिपतु ग्रन्दर गित की योग्यतारूप ग्रवस्थाविशेष है, उसमे उस समय जीव तन्मय है। जिस ग्राकार की लकडियाँ या पत्ते होते हैं, ग्रीन उसी ग्राकारमय हो जाती है, दाह्याकार से तन्मय हो जाती है, उससे जुदी नहीं रहती। उसी प्रकार ग्रात्मा चार गित श्रीर सिद्ध ग्रवस्था मे जिस पर्याय को प्राप्त करता है, उससे उस काल मे तन्मय हो जाता है।

प्रश्न: - कही ऐसा कथन भी आता है कि जिस प्रकार अग्नि तृगादिरूप परिग्मित नही होती, उसी प्रकार आत्मा गति आदि पर्यायरूप परिग्मित नही होता - वहाँ क्या अपेक्षित है ?

उत्तर: – भाई । वह कथन द्रव्यदृष्टि की अपेक्षा है, परन्तु द्रव्यदृष्टिवन्त को पर्याय का ज्ञान होने के काल मे, वह पर्याय किस रूप है ? यहाँ उसका ज्ञान कराया है।

यह प्रवचनसार ज्ञानप्रधान ग्रन्थ है।

जैसे ग्रग्नि उस-उस काल में लकडी, कण्डे, पत्त इत्यादि के ग्राकाररूप पर्याय में तन्मय है, उसी प्रकार द्रव्य उन-उन पर्यायरूप विशेषों के काल में उन-उन पर्यायमय ग्रर्थात् तन्मय है, उनसे ग्रनन्य है, भिन्न नहीं है। जैसे शरीर भिन्न है, कर्म भिन्न है, वैसे गतिरूप पर्याय भी जीव से भिन्न है—ऐसा नहीं है, बिल्क द्रव्य पर्याय से ग्रनन्य है—तन्मय है। बेचारे भोले ग्रज्ञानी जीवों ने ऐसा उपदेश भी जब कभी नहीं सुना तो विचार करने का ग्रवसर कहाँ से मिलेगा? दिन-रात कमाई ग्रौर स्त्री-पुत्रादि की सम्हाल से फुरसत मिले तब न? परन्तु भाई। यह सब तो पापभाव है। ग्ररे, भगवन्। यदि यह वात न समभी तो पाप की पोटली के भार से तू भवसमुद्र में डूव जाएगा।

यहाँ कहते हैं कि जिसने एक शुद्धद्रव्य को जाना है, उसे पर्याय को देखनेवाला ज्ञान भी उघडा है श्रीर वह इससे जानता है कि यह विशेष — पर्याय मुक्तमे है, श्रन्य कोई चीज मुक्तमे नहीं तथा मैं उनमें नहीं । स्त्री-पुत्र इत्यादि मेरे हैं — यह सब क्कूठी बाते हैं, क्योंकि मैं उनमें तन्मय नहीं तथा वे वस्तुएँ मुक्तमें तन्मय नहीं हैं । ऐसी वस्तु-स्थित है, फिर भी श्रज्ञानी परपदार्थों को श्रपना मान वैठा है। भाई । दुनिया को जमें या न जमें, वस्तुस्थित तो यही है। जिसे श्रपनी श्रात्मा के सिवाय वाहर की चमक में जरा भी वीर्य उल्लसित हो या उसमें जरा भी 'यह ठीक है' — ऐसा लगें, वह मिथ्यादृष्टि है। उसे न तो द्रव्य का ज्ञान है, न पर्याय का।

अपने द्रव्य और पर्याय के सिवाय परपदार्थ का चाहे जितना वैभव दीखे, उसका आत्मा के द्रव्य व गुरा से तो क्या ? पर्याय से भी श्रद्वितीय चक्षु ३७

कोई सम्वन्ध नही है। तेरी पर्याय मे जो गित हुई है, सिर्फ उससे तेरा सम्वन्ध है ग्रीर उस समय तू उसमे तन्मय है। घ्यान रहे मात्र उसी समय तन्मयता है, क्योंकि पर्याय सदा वही की वही नही रहती। मनुष्यगित से वदलकर एकदम देवगित हो जाएगी, देवगित से वदलकर एकदम मनुष्यगित हो जाएगी ग्रीर फिर मनुष्यगित से वदलकर एकदम मनुष्यगित हो जाएगी ग्रीर फिर मनुष्यगित से वदलकर एकदम सिद्धदशा हो जाएगी, इसिलए वे पर्याये जुदी-जुदी होगी, फिर भी उस समय तू उनसे ग्रनन्य है। इसप्रकार ग्रन्य-ग्रन्य होते हुए भी ग्रनन्य है। यहाँ तो पाँच पर्याये है, उन्हे परस्पर ग्रन्य-ग्रन्य कहा, परन्तु उस समय तो उनके साथ तन्मय होने से द्रव्य ग्रनन्य है। ग्रहों। सन्तों ने तो ग्रमृत की बेल बोई है।

ग्ररे भाई । द्रव्य मे जिससमय, जिसक्षेत्र मे, जिसप्रकार, जो होनेवाला है, उसीसमय, उसीक्षेत्र मे, उसीप्रकार, वही ग्रवश्य होगा, उसमे फेरफार नहीं हो सकता। परद्रव्य की पर्याय तुभे छूती भी नहीं है तो फिर भगवन् । तुभे किसकी चिन्ता है ? पर्यायाधिक नय से पर्याय के ग्रस्तित्व मे विद्यमान पाँचो गतियों में उस-उस काल में द्रव्य स्वय तन्मयपने हैं, परन्तु पर में कभी तन्मय नहीं होता — ऐसा ज्ञानी जानते हैं। मनुष्यगित की पर्याय के समय द्रव्य उससे तन्मय होगा, उस समय देवादि ग्रन्य ससार-पर्यायों से तन्मय नहीं होगा। इसप्रकार उन-उन विशेषों के समय उन मय होने के कारण उस-उस काल में द्रव्य उनसे ग्रनन्य हैं, जुदा नहीं — ऐसा ज्ञानी यथार्थ जानते हैं। पर्याय से देखने पर द्रव्य ग्रन्य-ग्रन्य भासित होता है, तो भी पर्याय में तन्मय होने से द्रव्य ग्रन्य भी है।

यहाँ तक एक आँख बन्द करके, खुली हुई दूसरी आँख द्वारा देखने की बात की।

ग्रब तीसरी बात करते हैं।

श्रीर जब उन द्रव्याधिक श्रीर पर्यायाधिक दोनो श्रांखो को एक ही साथ खोलकर उनके द्वारा श्रीर इनके द्वारा (द्रव्याधिक तथा पर्यायाधिक चक्षुश्रो के द्वारा) देखा जाता है; तब नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना श्रीर सिद्धपना — इन पर्यायो मे रहनेवाला जीवसामान्य तथा जीवसामान्य मे रहनेवाले नारकपना, तिर्यञ्चपना, मनुष्यपना, देवपना श्रीर सिद्धत्व — इन पर्यायस्वरूप विशेष, तुल्यकाल मे (एक ही साथ) दिखाई देते हैं।

देखो । यहाँ प्रमाण की बात की है। तुल्यकाल अर्थात् एक ही समय मे सामान्य को जाने और विशेष को भी जाने। घ्यान रहे कि यहाँ जानने की बात है, श्रादर तो एक द्रव्यसामान्य का ही है; विशेष का नहीं है। यहाँ तो ऐसा कहते हैं कि जैसे सामान्य को जानता है, वैसे विशेष को भी जानता है; मात्र जानने की अपेक्षा है। उपादेय तो एक शुद्ध आत्मद्रव्य ही है। विशेष (पर्याय) श्राश्रय करने योग्य नहीं है। यहाँ तो प्रतिसमय द्रव्य और पर्याय का अस्तित्व किसप्रकार है – उसकी सिद्धि करते है।

जब द्रव्याथिक श्रौर पर्यायाथिक दोनो चक्षुश्रों को एक ही साथ खोलकर देखा जाता है तब""।

देखो, यहाँ क्षयोपशमज्ञान मे दोनो को जानने का उघाड है, इसलिए कहा है कि दोनो चक्षुग्रो द्वारा एक ही साथ देखने पर सामान्य द्रव्य भी दीखता है श्रौर वह पर्यायो मे तन्मय है— ऐसा भी दीखता है; दोनो एक साथ दीखते हैं। यहाँ जानने की श्रपेक्षा बात है।

श्रहाहा ! जब दोनो चक्षुग्रो द्वारा देखा जाए, तब पाँचों पर्यायों मे रहनेवाला जीवसामान्य श्रीर जीवसामान्य मे रहनेवाली पाँचो पर्याये एक साथ दिखाई देती हैं। जीवद्रव्य एक ही साथ नारकत्वादि म्रद्वितीय चक्षु ३६

पाँचो पर्यायो मे रहता है - ऐसा नही है, परन्तु उस-उस समय एक-एक पर्याय मे रहता है, इसप्रकार ग्रलग-ग्रलग समयो मे पाँचो पर्यायो मे रहता है - ऐसा समभना चाहिए।

पहले द्रव्य को मुख्य श्रीर पर्याय को गौए। करके सामान्य को दखने के लिए कहा था तथा पर्याय को देखते समय सामान्यद्रव्य को मुख्यपने देखना छोड दिया था, लेकिन श्रव दोनो को एकसाथ देखने के लिए यह प्रमाराज्ञान कहा है। पर को देखने की यहाँ वात ही नही की, क्योंकि उसका यहाँ प्रश्न ही नही है। पर को जाननेवाली पर्याय श्रपनी है, पर की नही, पर के कारए। भी नही। पर को जानती है, इसलिए वह पर्याय पर के कारए। हुई है — ऐसा नही है। भाई। यह तो मात्र श्रपने द्रव्य श्रीर पर्याय के सिवाय श्रनन्त परद्रव्य श्रीर उनकी पर्यायों में गर्व (ममत्व श्रीर कर्त्तृत्व) को उठा देने की वात है। यदि पर में जरा भी गर्व रहा तो श्रात्मा की मृत्यु ही समक्तो।

ग्रहाहा, भगवन् । तू त्रिकाली सामान्यद्रव्य है श्रौर पाँच पर्याये तेरी विशेष है, उन पर्यायों के काल में तू उनमें तन्मय है। पाँचों पर्यायों में एक साथ नहीं, ग्रिपतु उस-उस गति के काल में ही उसमें तन्मय है। इसप्रकार पर्याय-श्रपेक्षा श्रन्य-श्रन्य होते हुए भी द्रव्य श्रपेक्षा श्रनन्य है, परन्तु परद्रव्य के साथ कभी भी श्रनन्य नहीं है। एक गति की पर्याय के समय दूसरी गति नहीं होती, इसलिए द्रव्य श्रन्य-श्रन्य है, परन्तु उस पर्याय से श्रनन्य है। द्रव्य श्रन्य द्रव्यों के साथ त्रिकाल में एकसमय भी श्रनन्य नहीं होता।

दलो । यह पुस्तक ग्रौर इसके पन्ने ग्रन्य द्रव्य की पर्यायें हैं, इनका जानना भी वास्तविक कहाँ हैं ? क्योकि उन्हें जानने के काल मे तो तू श्रपनी ज्ञानपर्याय में तन्मय है, उन पदार्थों में नहीं। शास्त्रादि को जाननेवाली ज्ञानपर्याय भी कही उनमें (शास्त्रादि मे) तन्मय नहीं हो जाती । दूसरे समय विशेष जात हुआ तो उस काल में भी वह जान पर के साथ तन्मय नहीं है। पर्याय अन्य-अन्य है, इसलिए पर्याय की अपेक्षा द्रव्य अन्य-अन्य है; परन्तु द्रव्य की अपेक्षा अनन्य है, क्योंकि पर्याय द्रव्य से कोई जुदी नहीं है। भाई । परद्रव्य और उसकी पर्याय तो स्वद्रव्य और अपनी पर्याय से विलकुल भिन्न है। अहाहा । जिस शरीर के साथ पचास-पचास या सी-सी वर्ष विताए हैं — ऐसे शरीर के साथ भी आत्मा एकसमय के लिए भी तन्मय नहीं हुआ। जविक पर्यायदृष्टि से देखने पर अपनी पर्याय अन्य-अन्य होते हुए भी, उनमें वर्त्तता होने के कारण द्रव्य उनसे अनन्य है।

श्रव कहते है कि एक श्रांख से देखा जाना, वह एकदेश श्रवलोकन है श्रोर दोनो श्रांखों से देखना, वह सर्वावलोकन (सम्पूर्ण श्रवलोकन) है; इसलिए सर्वावलोकन में द्रव्य के श्रन्यत्व श्रीर श्रवन्यत्व विरोध को प्राप्त नहीं होते।

देखो । एक चक्षु द्वारा देखने पर एक देश — एक भाग का ज्ञान होता है और दोनो ग्रॉखो से देखने पर सम्पूर्ण ज्ञान होता है। यह वात जानने को ग्रपेक्षा है। ग्रादरणीय क्या है? यह वात यहाँ नहीं है, क्योंकि ग्रादरणीय तो क्षायिकभाव भी नहीं है।

प्रश्न: — नियमसार, गाथा ५० मे तो क्षायिकभाव को भी परद्रव्य, परभाव श्रीर हेय कहा है, जबिक यहाँ कहते है कि द्रव्य गति के उदयभाव मे भी तन्मय है — यह कैसी वात है ?

उत्तर: भाई! नियमसार मे वहाँ उपादेयरूप शुद्ध अन्त तत्त्व, एक, शुद्ध, ज्ञायकमाव का लक्ष्य कराने का प्रयोजन है और यहाँ जिसे अन्त तत्त्व का भान हुआ है, उसके द्रव्य-पर्याय का प्रतिसमय अस्तित्व कैसा है — यह वताने का प्रयोजन है। यहाँ ज्ञानप्रधान शैली है। वापू! इस ग्रन्थ की एक-एक गाथा खूव गभोरता से भरी हुई है। कोई जपर-जपर में पढ़ ने तो वह इसका ममं कैमे नमन्त्रेगा?

भव ततने हैं कि सर्व-अवलोकन में द्रव्य के श्रन्यत्व श्रौर भनन्यत्य विरोध को प्राप्त नहीं होते।

द्रया जा धनगत्य प्रयांत् भिन्न-भिन्न पर्यायपना श्रांत श्रतन्यत्व सर्गात प्रतंनान श्रंथा पर्याय ने द्रय्य की श्रभिन्नता — इन दोनों में जोई प्रियोग नहीं झाता। जो गतिहप पर्याय है, वह श्रपने-श्रपने समय में एक-एक है, उनलिये श्रन्य-अन्य है। नमार की चार गतियों के काल में निज्ञन्य नहीं है नया निज्ञत्य के काल में समार की चार गतियां नहीं है — इन श्रमेशा ने द्रय्य को श्रन्यत्य है श्रीर श्रात्मा उनमें उन-उन नमय नन्मय है, उनलिए श्रनन्यत्य भी है। इसप्रकार सर्व-श्रयलाकन में द्रय्य के श्रन्यत्य श्रीर श्रनन्यत्य में विरोध नहीं श्राता।

नारे दिन रती-पुत्र की सम्हान में नगे रहनेवाने जगत को, ऐसी
नूध्य वान की रमक में प्रा नवनी है। प्ररेरे ! जिसे तत्त्व सुनने
ने निए भी पुरसत नहीं है, वह कही जाएगा? बहुत में जीवों को धर्म
तो दूर, पुष्प का भी टिकाना नहीं है — ऐसे जीव तो। मरकर तियंक्च
गनि में जाएँगे। यहां तो जीव को पर के सम्बन्ध में सर्वया भिन्न
बनाना है, फिर भी यह पर की व्यवस्था में प्रटक रहा है। भगवन् !
स्त्री, पुत्र, मकान, गहने, कपछे, जरीर, इज्जत — ये सब ध्रपने-ध्रपने
में हैं, उनमें तेरा कोई सम्बन्ध नहीं है, फिर भी प्रभु ! तू इनमें इक
गया है, तूने श्रपने को नहीं देखा, श्रपने द्रव्य-पर्याय का स्वरूप
नहीं जाना। यहां नो नेरे द्रव्य-पर्याय का ही स्वरूप बताया गया है।

20-00-

## भावार्थ पर प्रवचन

प्रत्येक द्रव्य सामान्य-विशेषात्मक है, इसलिए प्रत्येक द्रव्य वैसा का वैसा भी रहता है ग्रोर बदलता भी है।

प्रत्येक द्रव्य सामान्य-विशेपात्मक है, ग्रर्थात् द्रव्य मे जो विशेष-पना भासित होता है, वह उसका स्वरूप है। कोई विशेष परद्रव्य के कारण होता है — ऐसा नहीं है। सामान्य तो घ्रुव है। विशेष — पर्याय मे जो परिवर्तन होता है, उसमे पर की ग्रपेक्षा नहीं है, क्यों कि परिवर्तन होना पर्याय का स्वय स्वभाव है, इसलिये स्वद्रव्य की पर्याय मे किसी ग्रन्य द्रव्य की ग्रपेक्षा है ही नहीं। सम्पूर्ण विश्व मे अनन्त-श्रनन्त द्रव्य सामान्य-विशेपपने विराज रहे है, इसलिये उन्हें ग्रपने विशेप के लिए किसी ग्रन्य की ग्रपेक्षा नहीं है। उनकी श्रवस्थाग्रों को किसी काल या किसी क्षेत्र मे पर की श्रपेक्षा नहीं है। प्रत्येक द्रव्य की श्रवस्था ग्रपने काल मे स्वतन्त्र हो — ऐसा ही उसका सामान्य-विशेष स्वरूप है।

प्रत्येक द्रव्य सामान्यपने — घ्रुवपने रहता है, जिसमे वदलाव नहीं है प्रर्थात् वैसा का वैसा ही रहता है तथा विशेषपने वदलता भी है। महाहा । पलटना यह तो उसकी पर्याय का स्वभाव ही है, इसलिये पर्याय किसी अन्य के कारण पलटती है — ऐसा तीनकाल में भी नहीं है। जीव या पुद्गल किसी भी द्रव्य का नरक-निगोद या स्कन्घरूप किसी भी पर्यायरूप होना, उसका स्वभाव है; इसलिये यदि वह विशेष किसी पर के कारण उत्पन्न होता हुआ लगे तो वह दृष्टि विपरीत है। यह वात अज्ञानी के गले उतरना मुश्किल है, परन्तु क्या करे निस्तु का स्वरूप ही ऐसा है। शब्द तो सादे हैं, परन्तु भाव बहुत गम्भीर है।

ग्रहा । वस्तु का ग्रस्तित्व ग्रनन्त परपदार्थों से भिन्न है। ग्राकाश के एक प्रदेश में रहते हुए भी छहो द्रव्य भिन्न-भिन्न है। जीव ग्रसख्यात प्रदेशी हैं, इसलिए एक जीव ग्राकाश के एक प्रदेश में नहीं रह सकता, ग्रसख्यात प्रदेशों में रहता है। फिर भी यहाँ ऐसा कहते हैं कि जीव ग्रपने ग्रसख्यात प्रदेशों में रहता हैं, उसे ग्राकाश की ग्रपेक्षा नहीं है। वास्तव में तो जीव के प्रदेश ग्राकाश के प्रदेशों को छूते भी नहीं है।

प्रश्न: - ग्राकाण न हो तो सभी द्रव्य कहाँ रहेगे ? - ऐसा कयन ग्राता है न ?

उत्तर — भाई । यह तो निमित्त की कथनी है। ऐसा कथन भी तो ग्राता है कि यदि ग्राकाश परद्रव्यों को ग्राधार हो तो ग्राकाश का ग्राधार कीन हैं? तथा प्रत्येक द्रव्य के परिएामन में काल का निमित्त हैं तो काल के परिएामन में कीन निमित्त हैं? भाई । जब निमित्त की सिद्धि करना हो तब ऐसा कहा जाता है कि ग्राकाश न हो तो सभी द्रव्य कहाँ रहेगे? परन्तु इससे ऐसा नहीं समभना चाहिए कि कोई भी द्रव्य किसी ग्रन्य द्रव्य की पर्याय में कोई भी परिवर्तन कर सकता है, क्योंकि ऐसा वस्तु-स्वरूप ही नहीं है।

चीदह ब्रह्माड मे ग्रनन्त द्रव्य हैं। प्रत्येक द्रव्य ग्रपने से ही सामान्य-विशेपपने रहता है। श्रिक्रिय, घ्रुवरूप, सामान्य को तो पर की ग्रपेक्षा नही है, परन्तु जिसमे ग्रनेक भिन्न-भिन्न ग्रवस्थाएँ होती है – ऐसे विशेप को भी पर की ग्रपेक्षा नही है। विशेष भी द्रव्य का सहजस्वरूप ही है। जो पलटना होता है, वह उसका स्वय का स्वभाव ही है। विशेपपना पर के कारण हो – ऐसा वस्तुस्वरूप ही नही है। श्रात्मा को ग्रपने सामान्य ग्रीर विशेष के लिए किसी भी परद्रव्य की – यहाँ तक कि तीर्थंकर को भी ग्रपेक्षा नही है।

प्रश्न: - शास्त्र मे तो श्राता है कि सम्यग्दर्शन की प्राप्ति सद्गुरु के चरण-कमलो के प्रसाद से होती है ?

उत्तर: – हाँ, ऐसी भाषा तो बहुत ग्राती है, परन्तु यह कथन तो सम्यग्दर्शन के काल मे कैसा निमित्त होता है – यह वताने के लिए किया जाता है। ग्रात्मा ध्रुव सामान्यरूप है ग्रीर सम्यग्दर्शन उसका विशेष है, पर्याय है। वह विशेष ग्रात्मा का ही स्वरूप है, इसलिए वह किसी पर की ग्रपेक्षा नहीं हुग्रा है। गुरु के प्रसाद से या दर्शनमोह के ग्रभाव से सम्यग्दर्शन पर्याय हुई हो – ऐसा नहीं है। यदि ऐसा हो तो वहाँ द्रव्य के विशेष की – पर्याय की ग्रपनी स्वय की सामर्थ्य का ग्रभाव होगा।

तत्त्वार्थसूत्र मे ग्राता है 'तद्भाव. परिणाम.' ग्रथित परिणाम प्रव्य का स्वभाव है, इसलिए सम्यग्दृष्टि जीव ग्रपने सामान्य ग्रौर विशेष को छोडकर परपदार्थों से ग्रत्यन्त उदास है। किसी परपदार्थ की ग्रपेक्षा मुक्तमे कुछ फेर पड जाएगा या मेरे कारण पर मे कुछ फेर पड जाएगा या मेरे कारण पर मे कुछ फेर पड जाएगा सम्यग्दृष्टि की नहीं है। भाई। वात तो थोडी है, परन्तु उसकी गभीरता ग्रपार है।

श्रव कहते है कि द्रव्य का स्वरूप ही ऐसा उभयात्मक होने से द्रव्य के श्रनन्यत्व श्रीर श्रन्यत्व मे विरोध नहीं है।

द्रव्य सामान्य-विशेषस्वरूप ही है, इसलिए 'कोई पर्याय पहले नहीं थी श्रीर श्रव हुई है' — इस अपेक्षा अन्य-अन्य है, परन्तु उस-उस पर्याय में द्रव्य तन्मय है, इसलिए अनन्य है। इसप्रकार श्रन्यपना भी कहा जाता है श्रीर श्रनन्यपना भी कहा जाता है, दोनो में कोई विरोध नहीं है। मनुष्यगित के समय सिद्धगित श्रादि नहीं है श्रीर सिद्धपद के समय मनुष्यगित श्रादि नहीं है, इसलिए श्रन्य-श्रन्य कहा जाता है श्रीर उस-उस काल में द्रव्य उस-उस पर्याय में तन्मय है, इसलिए

भ्रनन्य भी कहा जाता है। इसप्रकार द्रव्य के भ्रनन्यपने भ्रौर भ्रन्यपने मे कोई विरोध नही है।

अव उदाहरए। देते है कि जैसे मारीचि श्रीर मगवान महावीर का जीवसामान्य की अपेक्षा से अनन्यत्व और जीव के विशेषो की अपेक्षा से अन्यत्व होने मे किसी प्रकार का विरोध नहीं है।

अहाहा । कहाँ मारीचि की पर्याय और कहाँ भगवान महावीर की पर्याय। पर्यायों की अपेक्षा देखने पर उनमें अन्यपना भासित होता है, फिर भी उन अवस्थाओं में जीव तो वहीं का वहीं हैं, इसलिए द्रव्य की अपेक्षा — जीवसामान्य की अपेक्षा अनन्यपना भासित होता है। इसप्रकार अन्यपना और अनन्यपना वस्तुस्वरूप में ही है, उनमें कोई विरोध नहीं है तथा पर की अपेक्षा भी नहीं है।

द्रव्यायिकनयरूपी एक चक्षु से देखने पर द्रव्यसामान्य ही ज्ञात होता है, इसलिये द्रव्य ग्रनन्य ग्रर्थात् वही का वही भासित होता है।

देखो । पर्याय को देखनेवाली आँख बन्द करके द्रव्य को देखने वाली आँख खोले तो एक द्रव्यसामान्य ही ज्ञात होता है, इसलिये द्रव्य अनन्य अर्थात् वही का वही भासित होता है।

श्रीर पर्यायाधिकनयरूपी दूसरी एक चक्षु से देखने पर द्रव्य के पर्यायरूप विशेष ज्ञात होते हैं, इसलिए द्रव्य श्रन्य-ग्रन्य भासित होता है।

पर्यायो मे तो बहुत ग्रन्तर दिखाई देता है। कहाँ मारीचि की मिथ्यादर्शनरूप ग्रवस्था श्रौर कहाँ मगवान महावीर की तीर्थंकर केवलीरूप ग्रवस्था ? पूर्व-पश्चिम का श्रन्तर है। कहाँ निगोद मे श्रक्षर के ग्रनन्तवे भागरूप ज्ञानपर्याय श्रौर कहाँ वहाँ से निकलकर

मनुष्य होकर ग्राठ वर्ष मे ही प्राप्त होनेवाली केवलज्ञान पर्याय ? उन पर्यायो मे जीवसामान्य तो वही है (एक ही है), परन्तु विशेष की ग्रपेक्षा से ग्रन्यपना भासित होता है, ग्रन्तर भासित होता है।

निगोद मे अक्षर के अनन्तवे भाग ज्ञान का उघाड है। वहाँ भी शुभभाव होता है, इसलिए कोई जीव वहाँ से निकल कर मनुष्य भी होता है। इस मनुष्य पर्याय मे आठ वर्ष की उम्र मे भी पूर्ण सामर्थ्य से भरे हुए भगवान आत्मा की दृष्टि करके, उसमे ही ठहरकर यह जीव केवलज्ञान प्राप्त कर लेता है। देखो, कहाँ निगोद मे अक्षर के अनन्तवे भागरूप ज्ञान और कहाँ मनुष्यपने मे केवलज्ञान एकदम इतना अन्तर । वीतराग का मार्ग अचिन्त्य और अलौकिक है, परन्तु लोगो ने दया, दान, प्रतिक्रमण, सामायिक, उपवास आदि किया-काण्ड मे धर्म मान लिया है। बाह्यव्रत मे सवर और तप-उपवास मे निर्जरा मान ली है। अरे रे, प्रभु । तूने क्या से क्या मान रखा है? भगवान के द्वारा कहे हुए अलौकिक द्रव्य और पर्याय – दोनो की तुभे खबर नही है। यहाँ कहते हैं कि भले पर्याय मे अन्तर मालूम पडता है, इसलिए अन्यपना भासित हो; परन्तु उन पर्यायो मे द्रव्य तो वही का वही है, इसलिए द्रव्य की अपेक्षा तो अनन्यपना है।

कोई अरबपित यहाँ गादी पर वैठा हो, पचीस-पचास नौकर हो, सब लोग सलाम करते हो, परन्तु आयु पूरी हो जाए तो मर कर नरक जाए। देखो। यहाँ पर्याय अपेक्षा अन्यपना है। क्षण मे दूसरी पर्याय और क्षण मे दूसरी पर्याय — इसप्रकार भिन्न-भिन्न पर्याय हैं, परन्तु वे पर्याय आरमा से भिन्न हैं — ऐसा नहीं है। आतमा से तो वे अनन्य ही है, क्योंकि उनमे आतमा ही वर्त्तता है। पर्याय से देखो तो द्रव्य अन्य-अन्य भासित होता है, परन्तु द्रव्य से देखने पर तो अनन्य है, क्योंकि पर्याय, द्रव्य से भिन्न नहीं है।

अव कहते हैं कि दोनो नयरूपी दोनो चक्षुश्रो से देखने पर द्रव्यसामान्य श्रीर द्रव्य के विशेष दोनो ज्ञात होते हैं; इसलिये द्रव्य श्रनन्य तथा श्रन्य-श्रन्य दोनो भासित होता है।

वस्तु स्वय त्रिकालध्रुवरूप भी है ग्रीर वर्त्तमानपर्यायरूप भी है – इसप्रकार दोनो भासित होते है। द्रव्य-पर्याय का ऐसा स्वरूप समभने की फुरसत न निकाले तो मनुष्यपना व्यर्थ चला जाएगा, क्यों कि मनुष्यत्व का जितना काल निश्चित है, उतना ही है। यदि द्रव्य की सामान्य-विशेष शक्तियों का ज्ञान नहीं किया, श्रीर पर के कारण मुभमें कुछ फेरफार होता है तथा मेरे कारण पर में कुछ फेरफार होता है तथा मेरे कारण पर में कुछ फेरफार होता है तथा मेरे कारण पर में कुछ फेरफार होता है – ऐसा मानकर प्रवर्त्तन किया तो प्रभु । तेरा परिभ्रमण नहीं मिटेगा, विपरीत दृष्टि के कारण तेरा भव-भ्रमण का चक्र नहीं मिटेगा; इसलिये द्रव्य-पर्याय का यथार्थ निर्णय करके द्रव्य-सामान्य का ग्राश्रय ले श्रीर उसमें लीनता कर, तो तुम्हे भ्रविनाशी, भ्रनन्त, ग्रतीन्द्रिय, ग्रानन्दमय, सिद्धपर्यायरूप विशेष प्रगट होगा।

तस्रांशिन्यपि नि-शेषधर्माणां गुरातागतौ । द्रन्याधिकनयस्यैव न्यापारान्मुख्यरूपतः ॥

जिस अशी या घर्मी मे उसके सब अश या घर्म गौरा हो जाते हैं, उस अशी मे मुख्यरूप से द्रव्याधिकनय की ही प्रवृत्ति होती है अर्थात् ऐसा अशी द्रव्याधिकनय का विषय है।

- प्राचार्यं विद्यानितः तस्वार्थश्लोकरातिक, नयविवरण, श्लोक द

## שרוד ניסם

## खी सन्तरी प्रशासम्

सेठा कालोगी, जयपुर

## रत्न-कणिकाएँ

मैंने तो यह वात पहले भी सुनो है – ऐसा मत मान ! क्योंकि जिसका वीर्य उछलता हुग्रा ग्रन्दर जाए, उसका सुनना ही वास्तविक में सुनना है।

\*

ग्रहो । ग्रज्ञानी जिसकी जरूरत है, उसकी दरकार नहीं करता भौर जिसकी जरूरत नहीं है, सारे दिन उसी की दरकार करता है।

\*

मोक्षार्थी को पहले ग्रात्मा को जानना चाहिए, मोक्ष या उसके उपायरूप सवर-निर्जरा को नही। \*

मिथ्यात्व को एक वार मार डाल । ग्रीर सोते हुए जीव को जागृत कर ।!

\*

इतना सुनने-समभने के वाद श्रव यह काल घवराने का नही, श्रपितु घवराहट टालने का है।

\*

स्व-परप्रकाशक स्वभाव होते हुए भी स्व के जान विना पर का यथार्थ जान नही होता।